मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका, सितम्बर २०२३, वर्ष ०७, अंक ०९

राधाष्टमी विशेषांक

मूल्य १०/-

झूलन-महोत्सव,रसमण्डप, बरसाना

अनुक्रमणिका

विषय- सूची		पृष्ठ- संख्या
१	श्रीराधाष्टमी का माहात्म्य	०५
२	'श्रीबरसाना' का इतिहास	१०
३	श्रीराधाजन्म-महोत्सव	१२
४	वास्तविक रहनी 'श्रीधामाराधना'	१५
५	'श्रीराधा' ही परमाराध्या	१७
६	सबसे सरस 'राधा नाम'	२४
७	भागवत में प्रतिपाद्य-शक्ति 'राधा'	२६
८	श्रीकरुणा-स्वरूपिणी 'भागवतजी'	३०
९	परम कृपामय 'श्रीराधावतार'	३३

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो | — *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

संरक्षक– **श्रीराधामानबिहारीलाल**

प्रकाशक – **राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)**

mob. राधाकांत शास्त्री 9927338666

ब्रजकिशोरदास.....6396322922

(Website :www.maanmandir.org)

(E-mail :info@maanmandir.org)

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें | हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ७:३० से ८:३० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:३० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत ३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता |

प्रकाशकीय

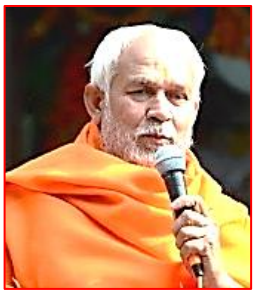

श्रीकृष्ण-प्रेयसी 'श्रीराधा' जगदाराध्या होने के साथ अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक परमपुरुष श्रीकृष्ण की भी आराध्या हैं । यही कारण है कि श्रीधाम 'बरसाना' में ब्रह्मगिरिपर्वत की चार शिखरों में मानगढ़ (मानमंदिर) में मानवती श्रीराधा जब मानलीला करती हैं तो श्रीकृष्ण उन्हें मनाने के लिए उनके चरणों में अपना मस्तक रखकर उनकी आराधना करते हैं; उन श्रीराधा का जन्मोत्सव सम्पूर्ण ब्रजमण्डल में आज भी ऐसे मनाया जाता है जैसे कि ब्रजवासी उन्हें प्राप्त कर अपने जीवन की सर्वोत्कृष्ट निधि पा चुके हों, ब्रजवासियों के लिए एक अद्भुत मणि हैं –

चिन्तामणिः प्रणमतां व्रजनागरीणां चूडामणिः कुलमणिर्वृषभानुनाम्नः ।
सा श्यामकामवरशान्तिमणिनिकुञ्ज भूषामणिर्हृदय-सम्पुट सन्मणिर्नः ॥ (श्रीराधासुधानिधि - २६)

'श्रीराधारानी' का यह उत्सव किसी देवी-देवता के जन्मकाल की स्मृति-स्वरूप नहीं अपितु वर्तमान में अपनी पुत्री के जन्मोल्लास के रूप में ब्रजवासी मनाते हैं, यही अनुभव करते हैं कि वे अभी प्रकट हुई हैं, श्रीराधासुधानिधि में यही भाव उल्लिखित है – **यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानुगेहे स्यात्किङ्करी भवितुमेव ममाभिलाषः ॥** (श्रीराधासुधानिधि - ४०)
वे प्रकट हुई नहीं थी अपितु वर्तमानकालिक-उक्ति यहाँ है कि वे वृषभानुजी की कन्या के रूप में अभी प्रकट हुई हैं । सम्पूर्ण ब्रज में अलौकिक उत्साह के साथ राधाष्टमी-उत्सव धूमधाम से मनाया जाता है । ब्रजवासी गाते हैं – 'राधा जनम बधाई होय, अरे होय मेरी मैया ।' श्रीराधारानी के माता-पिता के विषय में भी हमारी जिज्ञासा होती है कि यह सौभाग्य उनको कैसे मिला ? गर्गसंहिता में राजा बहुलाश्व को नारदजी सुनाते हैं कि महाराज नृग के पुत्र सुचन्द्र थे, उन्हें भगवान् का ही अंश माना जाता है । पूर्वकाल में अर्यमा प्रभृति पितरों के यहाँ तीन मानसी कन्याएँ उत्पन्न हुई थीं, जिनके नाम थे – कलावती, रत्नमाला और मेनका । पितरों ने स्वेच्छा से कलावती का हाथ भगवद्रूप सुचन्द्रजी के हाथ में दे दिया था और 'रत्नमाला' विदेहराज को तथा 'मेनका' हिमालय को समर्पित कर दी थी । सुचन्द्र और कलावती ने १२ वर्ष पर्यन्त आराधना की और ब्रह्माजी द्वारा वरदान प्राप्त किया तथा वे कालान्तर में भूतल पर वृषभानु-कीर्ति के नाम से उत्पन्न हुए । 'कलावती' कन्नौज में राजा भलन्दन के यज्ञकुण्ड से प्रकट हुई थीं और सुरभानु के घर सुचन्द्रजी का जन्म वृषभानु के रूप में हुआ; इन्हीं से श्रीराधारानी प्रकट हुई । वृषभानुबाबा की तीन राजधानियाँ रहीं – बरसाना, बरहाना और रावल ।
लीलादृष्टि से 'बरसाना' राधारानी को सबसे अधिक प्रिय रहा । यहीं गह्वरवन है, जो श्रीराधारानी ने अपने करकमलों से विकसित किया था – **यत्र गह्वरकं नाम वनं द्वन्द्वमनोहरम् । नित्यकेलिविलासेन निर्मितं राधया स्वयम् ॥** (श्रीवृषभानुपुरशतक - ७)
'खोर-खिरक-गिरि-गह्वर' सब कुछ बरसाना में ही है । राधाजन्मोत्सव 'राधाष्टमी' से लेकर त्रयोदशी तक यहाँ के विशेष रासोत्सव दर्शनीय हैं; घर-घर व समस्त मन्दिरों में एक अलौकिक वातावरण होता है । ब्रजरसरसिक संत प्रवर पद्मश्री श्रीरमेशबाबाजी भी मानमंदिर में यह उत्सव मनाते आ रहे हैं, जहाँ प्रतिवर्ष राधाष्टमी की पूर्व संध्या पर गह्वरवन-स्थित 'रसमण्डप' में किसी (श्रीभक्त-चरित्र इत्यादि भक्तिमय) भाव की नाटिका का मंचन होता है और दूसरे दिन श्रीलाड़िलीजी का जन्मोत्सव । देश के कोने-कोने से भक्तजन आकर बधाई गाते हैं और अपने को धन्य समझते हैं । हमारी पत्रिका के पाठक भी 'श्रीराधाजन्म-बधाई' का आनन्द लेना, इसी प्रसन्नता के साथ –

प्रबन्धक

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

श्रीराधाष्टमी का माहात्म्य

महाभाग श्रीरशंगजी द्वारा बसाए गए श्रीजी की नित्य क्रीड़ास्थली **'बरसाने'** ग्राम का नाम 'वरषाणा' भी है क्योंकि श्रीराधिका की जन्मभूमि होने से यहाँ नित्य-निरन्तर प्रेममयी भक्तिरस की वर्षा होती रहती है ।

"जय बरसानो गाँव जय जय श्री राधे ।
राधारानी को गाँव जय जय श्री राधे ॥"

रशंगजी के ही वंश में उत्पन्न हुए श्रीवृषभानुजी की पुत्री के रूप में श्रीराधारानी का आविर्भाव हुआ ।

"भादों सुदी अष्टमी तिथि भयी,
कीरति के कन्या सुखरासी ॥"

भाद्रमास की अष्टमी तिथि को वृषभानुजी की धर्मपत्नी रानी कीर्तिजी से एक दिव्य कन्या का प्राकट्य हुआ । इस कन्या के कारण वृषभानुजी का यश त्रिलोकी में चहुँ ओर फैला । जैसे - वृषराशि पर जब सूर्य आता है तो उसका तेज असह्य होता है, उसी तरह श्रीराधारानी के पिता का नाम 'वृषभानु' इसलिए पड़ा क्योंकि इनका यश अखिल ब्रह्माण्ड में प्रसरित हुआ –

'श्रीवृषभानु महीपति को यश
फैल रह्यो चहुँ ओर उजसि ।'
"राधा राधा नाम कहैं,
नाम लली को बाधा नासी ।"

'राधा' नाम उच्चारण करने पर करोड़ों जन्मों की बाधाएँ नष्ट हो जाती हैं, क्योंकि 'राध' धातु हिंसायाम्, 'राध' धातु के कई अर्थ हैं, जिस अर्थ में इसका तात्पर्य 'हिंसा' से है, उसमें समस्त पाप, बाधाएँ और संकट समाप्त हो जाते हैं ।

'श्रीजी' का धात्वर्थ है – 'श्री' श्रयणे धातु होती है, सहारा लेने के अर्थ में – **'सर्वैः जनाः आश्रियते इति श्री, सर्वैः आश्रयणीयो भवति यया ।' 'शृणाति हिनस्तिभक्तदोषान् इति श्री ।'** भक्तों के अन्दर जो दोष होते हैं, उनको श्रीराधारानी ही समाप्त करती हैं, इसलिए उनको 'श्री' कहा जाता है; इसका प्रमाण है - श्रीराधासुधानिधि में श्लोक - १८७) रसिकों ने कहा है – **"किशोरी जू के चरण महासुखदाई । जिनहि निरखि लाल भये प्रीतम, करति केलि मन भाई ॥"** श्रीजी के चरण-दर्शन (आश्रय) से श्रीकृष्ण अतिशय प्रेष्ठ बन गये । राधिकोपनिषद् में लिखा है – **'कृष्णेन आराध्यते इति राधा'** जो कृष्ण से आराधित होती हैं वह 'राधा' हैं । **'कृष्णं समाराधयति इति राधिका'** जो कृष्ण की आराधना करती हैं वे हैं **'राधिका'** ।

श्रीश्यामसुन्दर भी नित्य-निरन्तर श्रीजी के लीला-रस में निमग्न रहते हुए 'बरसाने, गह्वरवन' की ही याद करते हैं ।

श्रीराधाष्टमी महोत्सव कई लोग मनाते हैं किन्तु इसका माहात्म्य सभी को विदित नहीं है । नारद पांचरात्र में कहा गया है – **"यथा ब्रह्मस्वरूपश्चश्रीकृष्णः प्रकृते पराः। तथा ब्रह्मस्वरूपा च निर्लिप्ता प्रकृते पराः ॥"** जिस प्रकार श्रीकृष्ण प्रकृति से परे साक्षात् ब्रह्म हैं, उसी प्रकार श्रीराधिका भी हैं । **"आविर्भावस्य तस्याः कालेन नारद"** जिस तरह श्रीकृष्ण का आविर्भाव और तिरोभाव होता है, वैसे ही राधिकारानी का भी आविर्भाव और तिरोभाव होता है । श्रीराधा सत्यस्वरूपा हैं । पद्मपुराण में ब्रह्मखण्ड के सातवें अध्याय में राधाष्टमी महोत्सव का माहात्म्य वर्णित है । नारदजी ने ब्रह्माजी से पूछा – "पितामह ! राधाष्टमी महोत्सव का क्या माहात्म्य है ?" ब्रह्माजी बोले कि नारद ! सतयुग की बात है, लीलावती नामक एक परम पापमयी वेश्या थी, उसका उपाख्यान राजा परीक्षितजी से कुछ-कुछ मिलता है । परीक्षित को शाप के कारण तक्षक ने डसा, उनकी अकाल मृत्यु होने को थी परन्तु श्रीमद्भागवत कथा के श्रवण से उनको साक्षात् भगवद्धाम की प्राप्ति हुई । वह तो परम भक्त एवं धर्मात्मा, पुण्यशाली राजा थे, उनको जो शाप मिला था, वह ऋषि का शाप था अन्यथा उनका कोई पाप कर्म नहीं था किन्तु लीलावती तो परम पापमयी वेश्या थी, इसने केवल पाप किये थे । उसके पापों का ही परिणाम था कि एकबार उसे एक काले सर्प ने डस लिया और उसकी मृत्यु हो गयी । उसको लेने के लिए यमदूत पहुँचे । उसके शरीर में यमराज का पाश बाँधा गया और जैसे ही यमदूत उसे ले जाने को तैयार हुए, वैसे ही वहाँ भगवान् के दूत आ गए । उन्होंने यमदूतों से कहा – "रुको, तुम लोग इसको कहाँ ले जा रहे हो ?" यमदूत बोले – "यह पापमयी है, इसने जीवन में केवल पाप ही किया है । काले सर्प के काटने से इसकी अकाल मृत्यु हुई है । अब हम इसको नारकीय यातना देने के लिए नरक ले जा रहे हैं ।" विष्णुदूत बोले – "नहीं, इसका तुम लोग स्पर्श भी नहीं कर सकते

हो ।" यमदूत बोले – "क्यों ?" विष्णुदूत बोले – "एकबार इसने 'राधाष्टमी व्रत' किया था, 'श्रीराधाष्टमी उत्सव' मनाया था । इसीलिए तुमलोग इसका अब स्पर्श भी नहीं कर सकते हो ।" यमदूत बोले – "यह वेश्या कोई भक्त तो नहीं थी ।" विष्णुदूत बोले – "यह भक्त तो नहीं थी लेकिन एकबार यह कहीं जा रही थी, मार्ग में किसी स्थान पर कुछ भक्त लोग राधाष्टमी व्रत करके राधारानी का उत्सव मना रहे थे । इस वेश्या का कोई सौभाग्य था जो यह वहाँ उन भक्तों के बीच में खड़ी हो गयी । भक्तजन 'श्रीराधे-राधे' नामोच्चारण करते हुए संकीर्तन और नृत्य कर रहे थे । इस वेश्या को वह राधाष्टमी उत्सव बहुत अच्छा लगा । श्रीजी का नाम इतना मधुरतम है कि उन भक्तों के नृत्य-गान के साथ यह वेश्या भी नृत्य करने लगी । इस प्रकार इस वेश्या ने उस दिन राधाष्टमी उत्सव मनाया । उसी पुण्य के प्रभाव से अब इसके सारे दुष्कर्म समाप्त हो गए । इसलिए अब तुमलोग इसका यमपाश खोलकर अतिशीघ्र इसे मुक्त कर दो ।" विष्णुदूतों के आदेश से वेश्या का यमपाश खोल दिया गया और विष्णुदूत उसे भगवद्धाम ले गए । ऐसा आश्चर्यजनक राधाष्टमी उत्सव का माहात्म्य है । इसीलिए देवीभागवत में भगवान् नारायण ने नारदजी से कहा –

कृष्णार्चायामनधिकारो यतो राधार्चनं विना ।
वैष्णवै: सकलै तस्मात् कर्तव्यं राधिकार्चनं ॥

"नारद ! बिना राधारानी की उपासना किये कृष्णोपासना का अधिकार जीव को प्राप्त ही नहीं होता है । इसलिए सभी वैष्णवों को राधारानी की उपासना करना चाहिए ।" एक बार नारदजी ने ब्रह्माजी से पूछा – "पिताजी ! राधारानी का थोड़ा परिचय बताइये ।" ब्रह्माजी बोले कि 'श्रीराधिका' कृष्ण के प्राणों की अधिष्ठात्री देवी हैं, इनके बिना रासेश्वर एक क्षण को नहीं रह सकते – **कृष्ण प्राणाधिदेवी सा तदधीनो विभुर्यथा ।**

श्रीजी का नाम 'राधा' इसीलिए हुआ है क्योंकि संसार में जितनी भी कामनाएँ हैं, वे राधारानी की कृपा से पूर्ण होती हैं – **राधनोति सकलान् कामान् तस्मात् राधेति प्रकीर्तितः ।**

श्रीराधारानी के अवतार की कथा इस प्रकार से है कि एकबार नारदजी ने भगवान् शंकर से पूछा – "हे शम्भो ! कृष्णजन्माष्टमी के पंद्रह दिन बाद जो श्रीराधाष्टमी आती है, उस महोत्सव को आप अत्यंत धूमधाम से मनाते हैं, इसके बारे में मुझे भी कुछ बतायें ! ये राधा कौन हैं ? ये 'राधा' लक्ष्मी हैं अथवा देवपत्नी हैं अथवा महालक्ष्मी हैं अथवा सरस्वती हैं या अंतरंगा विद्या हैं या वैष्णवी प्रकृति हैं ? ये वेदकन्या हैं या देवकन्या हैं अथवा मुनिकन्या हैं ? हे शम्भो ! कृपा करके आप इनका परिचय भी बतावें !" भगवान् शंकर बोले कि नारद ! कोटि-कोटि महालक्ष्मी भी राधारानी के सामने तुच्छ हैं । मैं शंकर इनका वर्णन करने में असमर्थ हूँ । मैं शिव तो क्या त्रिलोकी में ऐसा कोई नहीं जो राधारानी की महिमा का वर्णन कर सके । अनन्त मुखों से भी उनकी महिमा का वर्णन नहीं हो सकता । वृषभानु और कीर्तिजी से राधारानी मध्याह्नकाल में प्रकट हुईं । यद्यपि बरसाने में राधाष्टमी पर प्रातःकाल श्रीजी का अभिषेक होता है किन्तु पुराणों में (गर्गसंहिता आदि में) राधारानी का प्राकट्यकाल मध्याह्न १२ बजे का समय बताया गया है, जिस समय सूर्य अपने सम्पूर्ण रूप में प्रकाशित होता है । राधाष्टमी के दिन शिवजी मंगलकलश की स्थापना करते हैं और स्वर्णमयी राधिका की पूजा करते हैं । एकबार मिथिला-नरेश राजा बहुलाश्व अपने राज्य में राधाष्टमी महोत्सव मना रहे थे, उसी समय देवर्षि नारद उनके महल में पहुँचे । देवर्षि को देखकर राजा बहुलाश्व बोले – "मुनिवर ! आप बहुत शुभ अवसर पर पधारे हैं । आज राधाष्टमी है, हर दिशा में राधानाम की ध्वनि गुंजायमान हो रही है । चहुँ ओर महाराज वृषभानुजी और कीर्तिरानी की महिमा गाई जा रही है परन्तु हे देवर्षि ! ये वृषभानु और कीर्ति कौन थे, जिन्हें राधारानी के माता-पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ?" नारदजी ने उत्तर दिया कि हे राजन ! वृषभानु और कीर्ति को राधारानी के माता-पिता बनने का सौभाग्य उन्हें बहुत बड़ी तपस्या और कृपा से प्राप्त हुआ । पूर्वजन्म में वृषभानुजी 'राजा सुचंद्र' थे एवं रानी कीर्ति 'कलावती' थीं । राजा सुचंद्र सूर्यवंशी राजा नृग के पुत्र थे । सुचंद्र को भगवान् का अंश माना जाता है, वह चक्रवर्ती सम्राट थे और कलावती तीन बहनें थीं, वे अर्यमा पितृश्वरों की मानसी तथा अयोनिजा कन्यायें थीं, ये पितृश्वर अंगिरा एवं स्वधा से उत्पन्न हुए थे । यद्यपि नारद जी ने बताया कि बड़ी कठोर तपस्या के कारण सुचन्द्र एवं कलावती को राधारानी के माता-पिता बनने का सौभाग्य मिला किन्तु वैष्णवाचार्य जैसे कि कृष्णदास कविराज जी चैतन्य चरितामृत में

लिखते हैं कि कोई जीव तपस्या करके भगवान् का माता-पिता नहीं बन सकता । सिद्धान्त यह है कि जब भगवान् अवतार लेते हैं तो नित्य वृषभानु और कीर्ति पृथ्वी पर आते हैं तो उनमे सुचंद्र और कलावती जी लीन हो जाते हैं, इनका भी तप था । उस तपाराधना की महिमा दिखाने के लिए कहा गया कि तपस्या के बल पर सुचंद्र और कलावती को राधारानी के माता-पिता बनने का सौभाग्य मिला । बहुत प्राचीन समय की बात है, दक्ष प्रजापति की सात कन्याओं में स्वधा नामक कन्या का विवाह अंगिरा के साथ हुआ था । पितृश्वरों की तीनों कन्यायें सनकादिक के श्राप से मनुष्ययोनि में आयीं । पितृश्वरों की ये कन्याएँ मानसी थीं, अयोनिजा थीं, सम्भोग से उत्पन्न नहीं हुयीं थीं, ये दिव्य कन्याएँ थीं, इनका नाम था - कलावती, रत्नमाला और मेनका, ये तीनों परम योगिनी, परम सुन्दरी तथा आराधनारूपा थीं । एकबार की बात है, ये तीनों कन्याएँ श्वेतद्वीप में भगवान् नारायण का दर्शन करने गयीं थीं । उन्होंने वहाँ भगवान् लक्ष्मीनारायण का दर्शन कर उनका स्तवन किया । उसी समय ब्रह्माजी के मानसपुत्र सनकादिक मुनीश्वर भी श्वेतद्वीप में भगवान् का दर्शन करने पहुँचे, ये तीनों कन्याएँ भगवान् के दर्शनजनित आनंद में ऐसी निमग्न थीं कि ये सनकादिक को प्रणाम करना भूल गयीं । उस समय भगवान् की ही इच्छा से सनकादिक ऋषि इन कन्याओं पर क्रुद्ध हो गए और उन्हें मनुष्ययोनि में जन्म लेने का शाप दे दिया । उनके शाप से भयभीत हुयी इन कन्याओं ने सनकादिकों से क्षमा माँगी तो उन्होंने इन्हें अभयदान देते हुए वरदान भी दिया कि तुम लोग मनुष्ययोनि में भी तीन महाशक्तियों की जननी बनोगी ।

विधाता की लीलायें तो आदि से अंत तक चलती ही रहती हैं । किसको कहाँ, कब और कैसे, क्या रूप देना है, ये लीलाधारी प्रभु की अद्भुत योजना का क्रम है । भगवल्लीलाओं को तो ब्रह्माजी भी नहीं समझ सकते फिर और कोई क्या समझेगा ? समय आने पर ये तीनों देवियाँ नर-योनि में प्रकट हुईं । कलावती राजा सुचन्द्र की पत्नी बनीं । राजा सुचन्द्र परम तेजस्वी चक्रवर्ती सम्राट थे, उन्होंने एकबार कलावती को साथ लेकर नैमिषारण्य के घोर जंगलों में गोमती नदी के तट पर दुष्कर तप किया । उनके तप से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी उनके समक्ष प्रकट हुए और उन्हें वरदान दिया कि तुम दोनों द्वापर युग में राधारानी के माता-पिता बनोगे । ब्रह्माजी के वरदान के बाद वही राजा सुचंद्र द्वापर में महाराज वृषभानु के रूप में प्रकट हुए और उनकी पत्नी कलावतीजी 'महारानीकीर्ति' के रूप में प्रकट हुईं । भलंदन नृप के यज्ञकुण्ड से कीर्तिजी का प्राकट्य हुआ था और ब्रज में महीभानजी के यहाँ वृषभानुजी प्रकट हुए । इन दोनों का विवाह सम्बन्ध नन्दबाबा ने कराया था । वृषभानुजी की ब्रज में तीन राजधानियाँ थीं –

(१) बरसाना (२) बरहाना (३) रावल । बहुत से लोग श्रीजी का जन्म रावल में मानते हैं, वह भी ठीक है लेकिन बरसाने में भी अवश्य श्रीजी का जन्म हुआ है, इसे रसिक महात्माओं ने गाया है । श्रीजी के मंदिर बरसाना में राधाष्टमी के दिन होने वाली समाज में आज भी यह पद गाया जाता है –

बरसाने से दौरि नारि इक नन्द महर घर आई री ।
आजु सखी मंगल में मंगल कीरति कन्या जाई री ॥

यह प्रमाण है और इस पद में अष्टछाप के प्रसिद्ध संत कवि नन्ददासजी ने बरसाने में श्रीजी की जन्मलीला गाई है –

नन्ददास सुख को सुखसागर प्रगटी है बरसाने ।
सब जग धाम, धाम पुनि जाको सो धाम पुजायो माँ ने ॥

मदनमोहन सूरदासजी ने गाया है कि बरसाने में वृषभानुकुण्ड में कमल के भीतर से एक कन्या का प्राकट्य हुआ – **बरसानों बर सरोवर प्रगट्यो अद्भुत कमल री । वृषभानु किरण प्रकाश पोषत रहति प्रफुल्लित सदा यह सरस सुन्दर अमल री । सखी चहुदिसि केशरी दलकर्णिका आकार राजित राधिका जस धवल री । सूरदास मदनमोहन पिय रसिक मकरंद हित सेवत सदा अलिन कोमल री ॥**

श्रीव्यासजी ने गान किया है – **आज बधाई है बरसाने कुँवरि किशोरी जनम लियो, सब लोक बजे सहदाने ।**
कहत नन्द वृषभानु राय सों और बात को जानै ॥

आज बरसाने में बधाई गाई जा रही है क्योंकि कुंवरि किशोरी वृषभानुनन्दिनी ने जन्म लिया है । नन्दबाबा वृषभानुजी से कहते हैं कि तुमने तो इस लाली के कारण सारे ब्रज को खरीद लिया ।

आज भैया बृजवासी सब तेरे हाथ बिकाने ।
या कन्या के आगे कोटिक बेटन को-को अब माने ॥

इसी तरह से अनेकों प्रमाण हैं –

आज बधायो मंगलचार उमा रमा सहित शची सरस्वती दरसन पावैं बार ।
धनि कीरति धनि वृषभानो, धनि बरसाने ॥

ये सब प्रमाण हैं कि बरसाने में राधारानी का जन्म हुआ है । रावल में भी कल्प भेद से श्रीजी का जन्म हुआ है ।

सूरसागर में सूरदासजी ने भी बरसाने में राधारानी के प्राकट्य का वर्णन किया है, इनके कथनानुसार बड़े-बड़े ऋषि राधाष्टमी के पहले ही बरसाने में आये हैं और रात्रि को वे सभी वृषभानु महल के सिंहपौर पर बैठकर प्रतीक्षा कर रहे हैं कि भगवती राधा कब प्रकट होंगी ? सूरदासजी वर्णन करते हैं –

जनम लियो वृषभानु गोप के बैठे सब सिंह द्वार री ।
लगन घड़ी बलि नक्षत्र शोधि के गुरुजन कियो विचार री ॥

ऋषि-मुनिगण सिंहपौर पर बैठे हैं, इतने में एक सखी दौड़ी-दौड़ी आती है ।

कबहुँक मनि आँगन आगे रहि बोलत द्विजवर बैन ।
कबहुँक सुधि पावत सुभवन में पुत्र जनम के चैन ॥
दौड़ी-दौड़ी आई है जहाँ बैठे बलि ग्वाल ।
वेगि पुकार कह्यो मुख आलि प्रगटी सुता लघु बाल ॥
हमारे कोटि पुत्र की आशा पूरन करी वृषभान ।
तब हँसि तारी दै गुरुजन को देख्यो जन्म विधान ॥

सूरदासजी वहाँ ऋषिगणों का नाम वर्णन करते हैं –

करभाजन, श्रृंगी, गर्ग मुनि नक्षत्र लग्न बलि शोध ।
भय अचरज ग्रह देखि परस्पर कहत सबन प्रतिबोध ।
सुद भादों शुभ मास अष्टमी अनुराधा के शोध ॥

अनुराधा नक्षत्र था, ऋषियों ने राधारानी की जन्म कुण्डली तैयार की । श्रीजी के जन्मोत्सव पर नव योगेश्वर भी बरसाने में पधारे थे । उन योगेश्वरों ने कहा कि इस बालिका का नाम 'राधा' होगा । राधारानी के समान सुन्दरी त्रिलोकी में कोई नहीं है । न लक्ष्मी, न पार्वती और न कामदेव की पत्नी रति । सभी सनातन ऋषि राधाष्टमी के दिन वृषभानु-भवन में आकर राधारानी के जन्म की प्रतीक्षा कर रहे थे । सभी ऋषि रात भर जाग रहे थे । दुर्वासाजी बोले – अरे ब्रजवासियों ! मैं श्रुति प्रमाण से कहता हूँ, मुझे निश्चित पता है कि श्रीराधिका के कारण ही नंदगाँव में नन्दबाबा के भवन में कन्हैयालाल प्रकट हुए हैं । ये युगल राधामाधव ब्रज में विहारकर प्रेम-माधुर्यमय सरस लीलाएँ करेंगे । जन्माष्टमी के दिन जो रस नन्दभवन में उमगा था, उससे अधिक रस बरसाने में 'राधारानी' के जन्म पर प्रवाहित हुआ । कन्या के जन्म की बात को सुनकर महाराज वृषभानुजी को जो आनन्द हुआ, उसका वर्णन नहीं हो सकता क्योंकि -

पूर्णानुरागरसमूर्तितडिल्लताभं ज्योतिः परं भगवतो रतिमद्रहस्यम् । यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानुगेहे स्यात्किङ्करी भवितुमेव ममाभिलाषः ॥

(श्रीराधासुधानिधि – ४०)

आज कौन प्रकट हुआ है, उसका क्या परिचय है ? रसिकजन कहते हैं कि पहले ब्रह्मतेज है, ब्रहतेज से आगे नीलतेज है और नीलतेज से आगे गौरतेज है, जो राधिकारानी हैं । वह राधारानी कैसी हैं ? परिपूर्ण प्रेमरस की वह मूर्ति हैं, विद्युल्लताओं के सदृश दैदीप्यमान जिनकी कान्ति है, वह 'गौर तेज' भगवान् श्यामसुन्दर की नीली ज्योति से भी परे है, वह रहस्यमयी ज्योति अनुरागमय प्रेमसार से युक्त है; वह कहाँ आई हैं ? वे अपनी कृपा से ही आई हैं, उनकी करुणा उनको इस धरा पर प्रकट होने के लिए विवश कर देती है, इसीलिये उनको परम करुणामयी कहा जाता है । रसिकों ने लिखा कि उनका प्राकट्य एकमात्र कृपा-करुणा से वृषभानुजी के भवन में हुआ । ऐसी श्रीराधा, वेद भी जिनकी महिमा का गायन नहीं कर पाते हैं, जो साक्षात् अनन्त करुणा की स्वरूपा सहज स्नेहमयी, दया-कृपामयी, वात्सल्यमयी हैं, जिनकी बड़ी दिव्य छवि है, तीव्र लावण्य से जो अत्यन्त ललित हैं, वे रससिन्धु की सार श्रीराधिका वृषभानुभवन में प्रकट होती हैं ।

राधाष्टमी-महोत्सव का ही अभिन्न अंग सांकरीखोर-लीला बरसाने की राधाष्टमी के अंतर्गत चतुर्दशी तिथि को आयोजित होने वाली साँकरी खोर की मटकी लीला का विशेष महत्व है । अस्सी वर्ष पूर्व मटकी लीला के इस महोत्सव के दर्शनार्थ सम्पूर्ण मथुरा जिले का अवकाश हुआ करता था और जिले के समस्त ब्रजवासियों का अपार समुदाय उमड़ पड़ता था किन्तु बीच में साम्प्रदायिक मदभेदों के कारण सम्पूर्ण मथुरा जिले के ब्रजवासियों का आगमन बाधित हो गया । वर्तमानकाल में बरसाने के निकटवर्ती ग्रामों के थोड़े ही ब्रजवासी आ पाते

हैं । मतभेद का कारण भी बहुत छोटा ही था । मटकी-लीला के आयोजन में रासमण्डली के लीलास्वरूप में श्यामसुन्दर का मुकुट बायीं ओर हो कि दाहिनी ओर हो, इसी बात को लेकर ऐसा साम्प्रदायिक वैमनस्य बढ़ा कि कोर्ट में मुकदमा पेश हुआ । उस जमाने के अंग्रेज जज ने खीजकर फैसला दिया कि मुकुट न दाहिनी ओर करो, न बायीं ओर बल्कि सीधा रखो । इस फैसले से कृष्णानन्दी वैष्णव चिढ़ गए क्योंकि सीधा मुकुट तो भगवान् राम का होता है । जज के फैसले के बाद भी निम्बार्क संप्रदायी एक साधु कुएँ में कूद पड़े और अपने हठ पर अड़े रहे कि मुकुट तो बायीं ओर ही रहेगा । आत्महत्या की हद तक आने पर अंग्रेज जज ने कहा कि ठीक है मुकुट बायीं ओर रखो लेकिन वल्लभकुल के वैष्णवों को आदेश दिया कि आप लोग अपनी ब्रजयात्रा अलग निकालो । इसके पूर्व इसी मटकी लीला को सभी सम्प्रदायानुवर्तीजन मिलकर एक साथ मनाते थे और वल्लभकुल की विशाल ब्रजयात्रा का भी बरसाना आगमन होता था, जिसमें बीस से तीस हजार यात्री तक सम्मिलित होते थे । परन्तु कोर्ट के फैसले के बाद वल्लभकुल की यात्रा का इस विशेष उत्सव पर आगमन स्थगित हो गया और इसके साथ ही ब्रजवासियों का जो अपार जनसमूह यहाँ एकत्रित होता था, वह भी बहुत कम हो गया । राधाष्टमी से जुड़ी इस मटकी-लीला का वर्णन ब्रजविभूति भगवदीय श्रीनारायण भट्टजी ने अपने ग्रन्थ "ब्रजोत्सव चंद्रिका" में "वार्द्धकी लीला" के नाम से किया है । ब्रजवासियों के द्वारा आगे चलकर इसका हिंदी अपभ्रंश "बूढ़ी लीला" के नाम से हुआ । राधाष्टमी से लेकर अगले ८ दिनों तक होने वाली परम्परागत दिव्य लीलाओं व विभिन्न दिव्य लीलास्थलों के दर्शन ।

(१) मोर कुटी, जहाँ युगलसरकार ने मयूर-नृत्य किया था, वहीं लड्डूलीला-दर्शन ।

(२) विलासगढ़ व झूलनलीला-दर्शन ।

(३) सांकरीखोर-दर्शन, दान एवं चोटीलीला एवं संध्या को प्रेमसरोवर गाजीपुर में नौकाविहार- लीला ।

(४) ऊँचा गाँव ललिता अटा पर ललिता विवाह उत्सव, संध्या को प्रियाकुण्ड जहाँ राधारानी ने विवाह के पीले हाथ धोये थे, वहाँ नौकाविहारलीला-दर्शन, रात्रि में मानगढ़ पर मानलीला-दर्शन ।

(५) दधिदानलीला-दर्शन साँकरीखोर ।

(६) नागाजी की कदम खंडी की लीला दर्शन ।

(७) महारास-दर्शन करहला ।

श्रीराधारानी के कारण ही सम्पन्न हुईं रसमयी लीलाओं का आधार अवतरितधाम का दिव्य स्वरूप आराधना से ही दिखाई पड़ता है । 'गह्वरवन' श्रीजी की अन्तरंग लीलास्थली है, यहाँ नित्य रसमयी लीलाएँ होती हैं, जिन लीलाओं में प्रवेश पाने व सेवाराधन हेतु स्वयं श्यामसुन्दर भी सखी-वेष में आकर श्रीजी की सखियों से करबद्ध याचना करते हैं – **गह्वरवन के वास की, आस करैं सिव सेष । इहाँ की महिमा कौन कहै, जहाँ स्याम धरैं सखी वेष ॥** श्रीराधिकारानी ने स्वयं इस वन को बनाया है, ये ऐसा प्यारा, सलौना वन है कि यहाँ आते ही श्रीश्यामसुन्दर भी मोहित हो जाते हैं – **यत्र गहवरकं नाम वनं द्वन्द्व मनोहरम् । नित्य केलि विलासेन निर्मितं राधया स्वयम् ॥** श्रीयुगलसरकार का परमरमणीय 'श्रीगह्वरवन' है, जिसके दर्शनमात्र से ही समस्त मनोविकार (राग-द्वेष आदि द्वंद्व) समूलतः सुदूर हो जाते हैं; जिसे स्वयं श्रीराधिकारानी ने नित्यलीलाविलास के लिए अपने हाथों से बनाया है । "श्रीधाम का वास्तविक स्वरूप केवल आराधना-शक्ति से ही प्रकट होता है, अतः प्रेमाराधना (नृत्य-गान) ही परमशक्ति है जो साक्षात् श्रीजी का ही स्वरूप है, जिसकी उपासना स्वयं रसिकशेखर श्यामसुन्दर करते हैं, इसलिए मानगढ़ उसी आराधना-शक्ति श्रीराधारानी का मानभवन है, जहाँ आज भी उसी रसमयी आराधना का स्वरूप साक्षात् दृष्टिगोचर होता है ।"

तस्माद् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम् । शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युपशमाश्रयम् ॥ (श्रीभागवतजी ११/३/२१)
जिसके अन्दर तीन चीजें हैं वही सच्चा गुरु है –(१) भक्तिशास्त्रों का सम्यक ज्ञान (२) ज्ञान केवल वाणी में न हो अपितु क्रियात्मक जीवन में हो यानि वह आराधना-उपासना परायण हो (३) ब्रह्म में अर्थात् भगवान् में उसकी सारी वृत्तियाँ शान्त हो गयी हों।

'श्रीबरसाना' का इतिहास

वृषभानपुरी 'बरसाने' को रशंगजी ने बसाया था; रशंगजी रघुवंशी राजा थे, इनके पूर्ववंशानुक्रम की कथा इस प्रकार से है – महाराज दिलीपजी को प्रारम्भ में कोई सन्तान नहीं थी, इसका कारण है कि एक बार जब वह सशरीर स्वर्ग में इन्द्र की मदद करने गये, वहाँ देवताओं को विजय दिलाकर पृथ्वी पर लौटने लगे । वह अत्यधिक शीघ्रता के साथ चल रहे थे क्योंकि उनकी रानी सुदक्षिणा ऋतुस्नाता (संतानोत्पत्ति हेतु शुभ मुहूर्त में स्थित) थीं, जो पुत्र की कामना से कातर हो रही थीं । मार्ग में राजा दिलीप को कामधेनु गाय के दर्शन हुये परन्तु उचित समय पर अपने सदन पहुँचने की त्वरा में वे उसे प्रणाम करना भूल गये, कामधेनु ने शाप दे दिया – "दिलीप ! तू पुत्र की कामना से जा रहा है लेकिन अब तुझे पुत्र की प्राप्ति नहीं होगी क्योंकि तूने मेरा अपमान किया है ।" उस समय आकाशगंगा में ऐरावत हाथी क्रीड़ा कर रहा था, इसलिए दिलीप को कामधेनु का शाप सुनायी नहीं पड़ा और वह अपने महल वापस आ गये किन्तु कामधेनु के शापवश वह दीर्घकाल तक पुत्रोत्पत्ति से वंचित रहे । एक दिन गुरुदेव महर्षि वशिष्ठ जी के पास जाकर उन्होंने अपनी मनोव्यथा प्रकट की – "गुरुदेव ! मैंने अनेकों यज्ञ किये परन्तु पुत्र की प्राप्ति अब तक नहीं हो सकी ।" वशिष्ठजी ने कहा – "दिलीप ! तुम कामधेनु द्वारा शापित हो, अतः उस दिव्य गौ की सेवा करो ।" दिलीप ने कहा – "गुरुदेव ! कामधेनु तो स्वर्ग में है अतः मैं उसकी सेवा किस प्रकार कर सकूँगा ।" वशिष्ठजी ने कहा – "कामधेनु की पुत्री नन्दिनी मेरे आश्रम पर है, वहाँ जाकर तुम उसकी सेवा करो ।" गुरु-आज्ञा प्राप्त कर दिलीप अपनी भार्या रानी सुदक्षिणा से बोले – "हे देवी ! गुरुदेव ने मुझे कामधेनु की पुत्री 'नन्दिनी गौ' की सेवा करने के लिए प्रेरित किया है ।" सती सुदक्षिणा ने कहा – "हे स्वामी ! ये तो अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है, अब तो हम दोनों मिलकर नन्दिनी की सेवा करेंगे, चलिए वन में गुरुदेव के आश्रम पर चलते हैं ।" इस प्रकार राजा और रानी गुरु वशिष्ठ के आश्रम पर पहुँचे । सुदक्षिणा अपनी कमर में गौसेवा हेतु फेंटा बाँधकर गोबर फेंका करती थीं और इस तरह अत्यन्त श्रद्धा और परिश्रमपूर्वक वह नन्दिनी की सेवा में समर्पित हो गयी । नन्दिनी की सेवा दम्पत्ति (राजा व रानी) ने इस प्रकार से किया कि वह परम प्रसन्न हो गयीं और एक दिन उसने परीक्षा लिया । नन्दिनी की माया के प्रभाव से एक सिंह वन में आया और उसे मुँह में दबोच लिया । गौ-सेवा में पूर्णरूपेण समर्पित दिलीप ने अपना धनुष उठाया किन्तु सिंह हँसने लगा और बोला – "दिलीप ! तू चाहे जितने भी दिव्य अस्त्रों का मेरे ऊपर प्रयोग कर, मेरे ऊपर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला क्योंकि मैं देवी दुर्गा का वाहन हूँ, मैं तो इस गाय को अवश्य खाऊँगा, यह मेरा भोजन है ।" दिलीपजी बोले कि तुम इन गौमाता के बदले मेरा शरीर ले लो किन्तु इसे छोड़ दो । सिंह ने परीक्षा लेते हुए कहा – "नहीं, तुम राजा हो, तुम्हारा अन्त हो जाने पर इस संसार की रक्षा कौन करेगा ।" महाराज दिलीप अड़े रहे और बोले – "तू मुझे खा ले किन्तु इस गाय को छोड़ दे ।" सिंह बोला – "तो अब तू मरने के लिए तैयार हो जा ।" दिलीप – "हाँ, तैयार हूँ ।" सिंह आकाश में भंयकर गर्जना करते हुए उड़ा और झपटकर दिलीप के ऊपर तीव्र वेग से हमला किया । जब सिंह दिलीप के ऊपर गिरा, उसके वेग से उनके शरीर पर धक्का लगा तो उन्होंने देखा कि गले में पुष्पमाला है, सिंह नहीं है । इतने में नन्दिनी ने कहा – "दिलीप ! यह मेरी माया थी, मैंने तेरी परीक्षा ली थी, उसमें तू सफल हो गया, अब तू मेरे दुग्ध का पान कर, इससे एक दिव्य सन्तान उत्पन्न होगी ।" दिलीप ने नन्दिनी से कहा कि गुरुदेव की आज्ञा बिना मैं तुम्हारे दुग्ध को ग्रहण नहीं कर सकता । माँ ! तू मुझ पर प्रसन्न हो गयी है किन्तु प्रथम स्थान तो गुरु का ही होता है । नन्दिनी ने कहा – "तू दूसरी बार भी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया । यदि बिना गुरुदेव की अनुमति के तुम मेरे दुग्ध को पी लेते तो सन्तान तो उत्पन्न होती किन्तु वह तेजस्वी नहीं होती परन्तु अब तेरे एक ऐसी सन्तान उत्पन्न होगी कि सम्पूर्ण वंश उसी के नाम से सुविख्यात होगा ।" (आगे वही रघुवंश हुआ; सूर्यवंश में रघु पैदा हुये और उसी वंश में भगवान् राम के अवतरित होने पर भी इस वंश का नाम रघुवंश ही कहलाया, राम वंश से इसकी ख्याति नहीं हुई । प्रभु राम में जो प्रभाव था, उनसे अधिक प्रभाव रघु

में था ।) अतः दिलीपजी ने गुरु वशिष्ठजी से कहा – "हे गुरुदेव ! नन्दिनी ने आपसे अनुमति लेकर ही मुझे दुग्ध पान करने की आज्ञा दी है ।" महर्षि वशिष्ठजी ने कहा कि मैं अनुमति प्रदान करता हूँ, तुम नन्दिनी का दुग्धपान अवश्य करो, इसके प्रभाव से तुम्हें एक दिव्य सन्तान की प्राप्ति होगी । दिलीप ने पयपान किया और इसके चमत्कारिक परिणामस्वरूप उनके यहाँ चार पुत्रों का जन्म हुआ । कालान्तर में दिलीप ने अपने राज्य को चार भागों में विभाजित कर चारों पुत्रों को उसे सौंप दिया । गौ-सेवा के चमत्कार से प्रभावित होने के कारण दिलीप के सबसे छोटे पुत्र धर्म ने कहा – "पिताजी ! मुझे राज्य नहीं चाहिए, मैं तो गौ-सेवा करूँगा ।" दिलीपजी बोले – "ठीक है, तुम गौचारण करो, गौ-सेवा राज्य के शासन से भी अधिक महत्वपूर्ण है ।" इसी वंश में आगे चलकर अभयकर्ण हुए । जब रघुवंश में भगवान् राम का प्राकट्य हुआ तो उन्होंने अपने सबसे छोटे भाई शत्रुघ्न को आज्ञा दी कि तुम ब्रज चले जाओ, मथुरा में लवणासुर दैत्य का वध करो । शत्रुघ्नजी जब ब्रज को चले तो वहाँ उपस्थित अभयकर्णजी ने उनसे कहा – "काका जी ! मैं भी ब्रज चलूँगा ।" शत्रुघ्नजी ने पूछा – "क्यों ?" अभयकर्णजी बोले – "मैंने सुना है कि ब्रज में यमुना तट पर मनोहारी दिव्य छटा व हरी-हरी सुमधुर घास है, उससे गौवंश अत्यन्त शीघ्र पुष्ट होता है । मुझे तो आजीवन गौ-सेवा करनी है, इसी उद्देश्य से मैं ब्रज चलना चाहता हूँ ।" शत्रुघ्नजी ने प्रसन्न होकर कहा – "चलो, अवश्य ही ब्रज-गमन करो ।"

श्रीमद्भागवत में ब्रज के बारे में उल्लेख है –

तत्र गाः पाययित्वापः सुमृष्टाः शीतलाः शिवाः ।
ततो नृप स्वयं गोपाः कामं स्वादु पपुर्जलम् ॥

(श्रीभागवतजी १०/२२/३७)

"श्रीकृष्ण-लीलाकाल में यमुना-जल इतना उज्ज्वल, मीठा, मधुर और कल्याणकारी था कि उसका पान करने मात्र से ही क्षुधा-निवृत्ति हो जाती थी । गौचारण करते समय जब ग्वालबाल यमुना-जलपान करते तो उनको भूख नहीं लगती थी ।" इसलिए श्रीराधामाधव की रसमयी लीलाओं से अभिसिंचित ब्रजभूमि की सहज परमप्रेमप्रदायिनी सुविशेषताओं के कारण ही अभयकर्णजी ब्रज में आये और यमुना तट पर गौ-चारण करने लगे । शुद्ध यमुनाजल इतना मीठा होता है कि इसके बारे में कहा गया है कि गंगाजी में रहने वाली मछलियाँ यमुनाजी में जीवित रह सकती हैं परन्तु यमुनाजी की मछलियाँ गंगाजी में जीवित नहीं रह सकती हैं । अभयकर्णजी के ही वंश में आगे चलकर राजा रशंगजी हुए । इन्होंने भी ब्रज में गौचारण किया । एक बार वे गायों को चराते हुए बरसाने की ओर आये, इन्होंने यहाँ देखा कि ब्रह्माचल पर्वत के चार अत्यन्त विशाल और रमणीय शिखर हैं - मानगढ़, दानगढ़, विलासगढ़ और भानुगढ़ । बरसाने का एक नाम बृहत्सानु भी है । ऐसा स्थान जहाँ श्रेष्ठ पर्वत शिखर हैं, ऐसा परम रमणीक स्थल संसार में अन्यत्र कहीं नहीं है । चारों शिखर समीप में ही स्थित एक-दूसरे से मिले हुए हैं । चारों शिखरों की पृथक-पृथक शोभा है । बरसाने की ऐसी अलौकिक छटा देखकर रशंगजी अतिशय प्रसन्नता से बोल उठे – 'मुझे यहीं बरसाने में ही रहना है, अब मैं कहीं और नहीं जाऊँगा, मैं तो बरसानावासी हो गया ।' इस ग्राम का नाम 'वरषाणा' भी है क्योंकि यहाँ निरन्तर रस की वर्षा होती रहती है ।

"जय बरसानो गाँव जय जय श्री राधे ।
महारानी को गाँव जय जय श्री राधे ।
राधारानी को गाँव जय जय श्री राधे । "

रशंगजी ने बरसाने को बसाया और दृढ़ निश्चय कर लिया कि अब मैं बरसाने में ही सदा-सर्वदा निवास करूँगा, कभी भी इस रसमय वृषभानुपुरी को नहीं छोड़ूँगा । रशंगजी के ही वंश में श्रीवृषभानुजी उत्पन्न हुए और उन्हीं की पुत्री के रूप में श्रीराधारानी का आभिर्भाव हुआ ।

"श्रीराधारानी की - जय हो ।"

संत बिसुद्ध मिलहिं पुनि तेही । चितवहिं राम कृपा करि जेही ॥ (श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड – ६९)

विशुद्ध सन्त के सत्संग से ही जीव के हृदय में भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का उदय होता है, चाहे वे किसी को अपना शिष्य भले ही न बनायें ।

श्रीराधाजन्म-महोत्सव

"भादों सुदी अष्टमी तिथि भयी, कीरति के कन्या सुखरासी ॥" भाद्रमास की अष्टमी तिथि को वृषभानुजी की धर्मपत्नी रानी कीर्तिजी से एक दिव्य कन्या का प्राकट्य हुआ । इस कन्या के कारण वृषभानुजी का यश त्रिलोकी में चहुँ ओर फैला । वृषराशि पर जब सूर्य आता है तो उसका तेज असह्य होता है, श्रीराधारानी के पिता का नाम 'वृषभानु' इसलिए पड़ा क्योंकि इनका यश अखिल ब्रह्माण्ड में प्रसरित हुआ ।

"श्रीवृषभानु महीपति को यश फैल रह्यो चहुँ ओर उजसि ।" वृषभानुजी की कन्या का नाम 'राधा' था ।

"राधा राधा नाम कहैं, नाम लली को बाधा नाशी ।" 'राधा' नाम उच्चारण करने पर करोड़ों जन्मों की बाधाएँ नष्ट हो जाती हैं, क्योंकि 'राध' धातु हिंसायाम्, 'राध' धातु के कई अर्थ हैं, जिस अर्थ में इसका तात्पर्य हिंसा से है, उसमें समस्त पाप, बाधाएँ और संकट समाप्त हो जाते हैं । दिव्य कन्या के जन्म का समाचार सुनते ही बरसाने में चारों ओर बधाई बज गयीं और जब बरसाने में बधाई बजी तो तीनों लोकों में एक साथ वृषभानुनन्दिनी के जन्म की बधाई बजीं –

"श्री बरसाने बधाई बजी । तिहुँ लोक करें सब धूम-धुमासी ॥
जय बरसानों गाँव जय जय श्री राधे ।
जय जय राधा नाम जय जय श्री राधे ॥"

भाद्र मास की अष्टमी तिथि को अनुराधा नक्षत्र में प्रातःकाल कीर्तिकन्या के जन्म के मंगलमय अवसर पर वृक्षों पर चढ़कर ब्रजवासी चिल्लाने लगे – 'वृषभानुजी के यहाँ एक कन्या का जन्म हुआ है ।' इतना सुनते ही नगाड़ा और शहनाई की मांगलिक ध्वनियाँ गूँजने लगीं ।

"जैसेइ जन्म सुनो राधे को, दुन्दुभी बाज रही शहनाई ।" जब बरसाने में ब्रह्माचल पर्वत के ऊपर शहनाई बजी तो तीनों लोकों में भी एक साथ शहनाइयाँ बजाई जाने लगीं । आकाश-पाताल आदि सभी स्थलों पर यही ध्वनि मुखरित हो उठी – "राधा जन्म हुआ है, राधा का प्राकट्य हुआ है, राधारानी की जय हो – **"ब्रज की कहा कहौं सजनी, तिहुँ लोक बजी आनन्द बधाई ।"** एक क्षण में ही सम्पूर्ण ब्रज में सबको यह पता पड़ गया कि वृषभानुजी के यहाँ कन्या का जन्म हुआ है । उस जमाने में लाउडस्पीकर, रेडियो, टेलीफोन अथवा वायरलैस यंत्र नहीं थे किन्तु एक क्षण में ही सबको सूचना प्राप्त हो जाती थी; कैसे ? जैसे बरसाने से कोई बात बरसाने के बाहर तक कहनी हैं तो लोग ऊँचे पेड़ पर बैठकर नगाड़ा बजाते थे, दूसरे गाँव वाले भी नगाड़े की आवाज सुनकर अपने गाँव के पेड़ पर चढ़कर तीव्रता के साथ नगाड़ा बजाते थे, इस तरह दूसरे-तीसरे-चौथे क्रमशः सभी गाँवों के लोग पेड़ों पर चढ़कर तीव्र ध्वनि के साथ नगाड़े बजाते थे, इस तरह सभी जगह सूचना फैल जाती थी । प्राचीन भारत में किसी सूचना अथवा समाचार को सब ओर प्रेषित करने की यही परम्परा थी । इसी परम्परानुसार बरसाने के ब्रजवासियों द्वारा श्रीजी के जन्म का समाचार सारे ब्रज में प्रसारित कर दिया गया । सम्पूर्ण ब्रज के ब्रजवासी राधारानी का दर्शन करने और उनकी जन्म बधाई में सम्मिलित होने के लिए बरसाने की ओर दौड़े । **"धाय चले ब्रजवासी जब सब, रच पचके सिंगार बनाये ॥"** (आज से लगभग ६५ वर्ष पूर्व जब पूज्य श्रीबाबामहाराज ब्रज में आये तो उन्होंने देखा कि श्रीजी के मन्दिर में समाज-गायन 'लीलासम्बन्धी पदगान' हेतु गोस्वामीगण आते थे तो उनके सिर पर पाग और दिव्य वेष होता था, ऐसा प्रतीत होता था कि आकाश से उतरकर किसी दिव्य लोक से आये हैं ।)

इधर बरसाने में श्रीजी के जन्म-महोत्सव पर जो भी जाता, नाचते हुए जा रहा था क्योंकि श्रीजी की जन्म-बधाई के दिन जिसने नृत्य नहीं किया, उसका शरीर व्यर्थ है । **"नाचत गावत करत कोलाहल"** नृत्य करते हुए ब्रजवासी कह रहे हैं – **"आज बधाई कीरति माई ।"** ब्रज के गाँव-गाँव से जो भी बरसाने आ रहा है, वृषभानु बाबा ने अपना भंडार खोल दिया, याचकों के लिए, अतिथियों के लिए खुली छूट थी, हीरा लूट लो, मोती लूट लो, मणि लूट लो । श्रीजी के समाज में पद गाया जाता है कि राधाष्टमी के दिन स्वयं लक्ष्मीजी सेवा के लिए आ गयीं । ब्रज में असंख्य मणियाँ भर गयीं । वृषभानुजी मणियाँ लुटा रहे हैं किन्तु कोई ब्रजवासी उन्हें ले नहीं रहा है, इसको 'ब्रजवासी' कहते हैं । **"जन्मी भानुलली सुनके, चले ब्रजवासी रंग रचाय ।"** देने पर भी ब्रजवासी बहुमूल्य रत्नों को नहीं ले रहे हैं, माँगना तो बहुत दूर की बात है । (लगभग ६५ वर्ष

पूर्व श्रीबाबा महाराज ने ऐसे ब्रजवासियों को देखा जो मन्दिर में अर्पित किये गये धन को ग्रहण नहीं करते थे । महाराजश्री ने एक वृद्ध ब्रजवासी, जो बरसाने में रहता था, उससे पूछा – "बाबा ! आप मन्दिर में चढ़ाये गये धन को क्यों नहीं लेते ?" उसने फटकारते हुए कहा – "अरे बाबाजी ! तू कैसी बात करै, कहा छोरी कूँ धन हम हड़पेंगे, राधा हमारी छोरी है, वाकौ धन हम काहे कूँ लेंगे, तुम्ह ऐसी बातन् कूँ काहे कहो ।" बरसानानिवासियों का ऐसा दिव्य भाव सुनकर श्रीबाबामहाराज ने कहा – "हे बाबा ! हमने गलत कह दिया, क्षमा करो ।")

श्रीजी के मन्दिर में एक पद गाया जाता है – **"महर के कपड़ा कोट लुटत हैं ।"** राधाजन्मबधाई में करोड़ों वस्त्र लुटाये जाते हैं लेकिन कोई उन्हें लेता नहीं है । **"मोती माणिक लेत न याचक ।"** वृषभानुबाबा याचकों से कहते हैं कि मणि-मोतियाँ आदि रत्नों को लूट लो, इन्हें ले जाओ किन्तु याचकजन वृषभानुजी से कहते हैं – नहीं..., बाबा ! हम तेरे मणि-माणिक, मोती आदि नहीं लेंगे । वृषभानुजी ने पूछा तो फिर क्या लोगे ? याचक बोले – "हमे राधा का मुख दिखा दो । मोती-माणिक लेकर हम क्या करेंगे ?" **"राधा दर्शन आस लगाये ।"** इसके बाद दधिकांदो आरम्भ हुआ । दूध-दही और माखन फेंका जाने लगा । **"नाचत-गावत गोपिका गोप जू, दूध-दही हल्दी लपटाए ।"** गोप-गोपिकागण एक-दूसरे के ऊपर दूध-दही के बड़े-बड़े माट उड़ेल रहे हैं और बोलते हैं – 'हर-हर गंगे ।' बरसाने की गोपिकाओं ने यशोदा मैया और नन्दबाबा को पकड़ा, वे भी बधाई देने आये थे । गोपियों ने यशोदा मैया से कहा – "यशोदा ! तू तो बधाई के गीत गाकर हमें सुना और नन्दबाबा नाचेंगे । तुम दोनों मिलकर नाचो और गाओ ।" **"गवाये बधाये यशुमति के, मिल आँगन नन्दहिं नाच नचाये ।"** ब्रज में एक प्राचीन प्रथा है 'चाव' ले जाने की । जिसको नहीं पता है, वह आज भी इसे देख सकता है । राधाष्टमी महोत्सव एक सप्ताह तक चलता रहता है, उसमें ब्रजवासीजन 'चाव' ले जाते हैं । (टोल के टोल ब्रजवासी गाते-बजाते हुए राधा लाली के लिए खिलौना, आभूषण, छोटी-सी लाली है तो उसके लिए नीली झिंगुली, कड़ा-

भानोखर आनन्द बधाई, बरसाने नर-नारी बधाई ॥
खोर साँकरी की गलियन में, जुरी मण्डली गाय बधाई ।

छड़ा, मिठाई आदि भेंट की सामग्रियाँ लेकर आते हैं, इसे ब्रजवासीजन ब्रजभाषा में 'चाव' कहते हैं ।) राधिकालाली के जन्मोत्सव पर सम्पूर्ण ब्रज से चाव आ रही है । **"नाचत मोद भरी सब गोपी"** गोपिकाएँ नृत्य करते हुए चाव ले जा रही हैं – **"गाय रहीं हुलसाय बधाई ।"** (पूज्य बाबा महाराज जब ब्रज में आये थे तो राधाष्टमी के अवसर पर 'बाबाश्री' भी चाव ले जाने वाले ब्रजवासियों के साथ बधाई के गीत गाते हुए श्रीजी मन्दिर जाते थे ।)

"कंचन थार लिये सिर पे, चली भानुभवन लिये चाव बधाई ।
कीरति के जनमी एक कन्या, यह बात सुनी नहिं फूली समाई ॥" सभी ब्रजांगनाएँ राधाजन्म की बात सुनने से अति प्रसन्नता के कारण पहले से अधिक स्थूल (मोटी) हो गयीं, अंगों में स्थूलता की इतनी वृद्धि हुई कि लंहगा-फरिया-चोली आदि वस्त्र धारण करना भी सहज नहीं रह गया । ये ब्रजदेवियाँ वृषभानुभवन पहुँचकर परस्पर जय-जयकार कर रही हैं । **"कीरति के जयकार मची ।"**

कोई वृषभानु बाबा की तो कोई कीर्ति मैया की और कोई राधारानी की जय-जयकार बोल रहे हैं । **"कहूँ भानु की, राधा की जय जय सुनाई ।"** बोलो - कीर्ति मैया की जय हो, वृषभानु बाबा की जय हो, राधारानी की जय हो ।

"बजी बधाई भानुभवन में, गोपी ग्वाल जू नचे बधाई ।" चाव लेकर ब्रजस्त्रियाँ वृषभानुभवन में पहुँच कर उमंग में भरकर नृत्य करने लगती हैं । **"मन्दिर-मन्दिर श्री बरसाने, घर-घर गली बधाई-बधाई ।"** बरसाने के हाट (बाजार) बंद हो गये । हर दुकान पर बधाई-उत्सव मनाया जाने लगा । दुकानदारों ने सौदा बेचना बंद कर दिया ।

"घाट बधाई बाट बधाई पर्वत ऊपर मची बधाई ।" ब्रह्माचल पर्वत के शिखरों मानगढ़, दानगढ़, मोरकुटी, विलासगढ़ आदि सभी स्थलों पर राधिका-जन्मोत्सव की बधाइयाँ गाई जा रही हैं । (आज भी राधाष्टमी के परममंगलकारी सुअवसर पर बरसाने की गलियों, बाजारों और ब्रह्माचल पर्वत की शिखरों पर बधाई-रसोत्सव का ऐसा ही दिव्य दृश्य चहुँओर दृष्टिगोचर होता है ।)

आकाश में भी बधाई-गान हो रहा है – **प्रिया कुण्ड पै भयी बधाई, प्रेम सरोवर छाई बधाई ।**
गह्वरवन ह्वै रही बधाई, मन्दिर मान बधाई-बधाई ॥

राधाष्टमी के दिन केवल नर-नारियों और देवताओं ने ही 'श्रीराधिकाजन्म बधाई-उत्सव' नहीं मनाया अपितु –

कुञ्जन-कुञ्जन श्री राधा को, जन्म महोत्सव बजी बधाई ।
पात-पात पे फूल-फूल पे, गावत भ्रमर समूह बधाई ॥

बरसाने की प्रत्येक कुञ्ज में श्रीराधाजन्ममहोत्सव की बधाई मनाई जाने लगी । वृक्षों के पत्र-पुष्प पर बैठे भ्रमर भी श्रीराधाजन्म-बधाई का गायन करने लगे । **"शुक पिक मैना हंस चकोरा ।"** तोता-मैंना और हंस व चकोर आदि पक्षी भी बधाई- गायन में सम्मलित हो गये ।

"पंख खोल नचे मोर बधाई, ग्वाल बधाई खिरक बधाई ।" मयूर अपने रंग-बिरंगे पंख फैलाकर नृत्य करते हुए बधाई-उत्सव मनाने लगे । गाय-बछड़े भी बधाई के आन्दोत्सव में सहभागी बन गये । **"गौ-गौवत्स बधाई-बधाई ।"** यह बधाई उत्सव तो बरसाने में मनाया गया किन्तु वृन्दावन में क्या हुआ? **"वृन्दावन उमग्यो राधा को ।"** राधारानी के जन्म की बधाई देने के लिए यमुनाजी में प्रेम और आनन्द की बाढ़ आ गयी । **"उमगी यमुना रस सरिता री ।"** जैसे श्रीकृष्ण-जन्म के समय सम्पूर्ण ब्रज-वृन्दावन पुष्पों से लद गया था, वैसे ही श्रीराधारानी के प्राकट्य होने पर भाद्रपद शुक्लपक्ष में ब्रज-वृन्दावन की सारी धरती पुष्पों से लद गयी । **"पुष्पमयी भई ब्रज-अवनी ।"** ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि वृन्दावन की धरा ने विचार किया कि बहुत ही शीघ्र हमारे ऊपर रास की रचना होगी । **"रचिहैं निशि रास शरद उजियारी ।"** हर लता 'पुष्प' से लद गयी, वृक्षों से मधु-धाराएँ बहने लगीं –

फूली लता वृक्ष मधु झर रहे, झरना झरे अमित रस भारी ।
जीवन मूरि कृष्ण की प्रकटी, कृष्ण प्राण की पोषणहारी ॥

श्यामसुन्दर की जीवनप्राणाधार श्रीजी के प्राकट्य से सभी दिशाओं में प्रेमरसानन्दोत्सव उमड़ रहा है ।

रशंगजी ने बरसाने का नामकरण किया था - **'वरषाणा'** - इसका अभिप्राय है कि यहाँ सर्वदा रस बरसता रहता है, यह दिव्य भूमि है । रशंगजी ने दृढ संकल्प कर लिया था कि मैं कभी बरसाने को नहीं छोड़ूँगा, इसीलिए जब उनके वंश में राधारानी का प्राकट्य हुआ तो उन्होंने भी कभी बरसाने को नहीं छोड़ा । किशनगढ़ के राजा, परमरसिक भक्त श्रीनागरीदासजी बरसाने में आये और देखा कि बरसाना बहुत सुंदर है, इसके बाद उन्होंने आजीवन बरसानावास किया, इनकी धाम-निष्ठा का एक प्रसिद्ध पद है – **तलहटी बरसाने की रहिये ॥**

बरसाने की तलहटी में रहो । प्रश्न हुआ कि यहाँ क्यों रहा जाए तो आगे की पक्तियों में वह उत्तर देते हैं –

नितप्रति श्री वृषभानु सुता के, हुलस-हुलस गुण गइये ।
खोर साँकरी के भीतर चल, कृष्ण कुण्ड पर अइये ॥
गह्वरवन की बैठ लतन में, राधा-राधा गइये ।
मोर कुटी और दान मानगढ़, गढ़ विलास सुख पइये ॥
सदा सर्वदा पर्वत ऊपर, नित प्रति चढ़-चढ़ जइये ।
नागरिदास वास बरसानों, कुँवरि दिए सो पइये ॥

जब श्रीबाबामहाराज प्रथम बार बरसाना आये तो उनके गुरुजन श्रीप्रियाशरणजी महाराज व गह्वरवनवासी पंडित श्रीहरिश्चंद्रजी महाराज ने उनसे कहा था कि कभी भी बरसाने को मत छोड़ना । तब से बाबाश्री को यहाँ निवास करते हुए ६५ वर्ष व्यतीत हो गए, आज भी सुदृढ़ निष्ठापूर्वक वह अखण्ड बरसानावास कर रहे हैं । ६५ वर्ष पहले मानगढ़ डाकुओं का अड्डा बना हुआ था लेकिन जब पूज्य श्रीबाबामहाराज ने आकर यहाँ निवास किया तो चोर, डाकुओं ने आपको यहाँ से निकालने के लिए भरसक प्रयत्न किया; श्रीबाबामहाराज को बारह बन्दूकें, हिंसक हथियार आदि दिखाकर आतंकित करने का प्रयास किया गया किन्तु आपने भी सुदृढ़ संकल्प कर लिया था कि भले ही प्राण चला जाए तो चला जाए किन्तु मानगढ़ को नहीं छोड़ूँगा, अन्त में अनिष्टकारी लोग अपने-आप मानमंदिर को छोड़कर चले गये । इसलिए सच्चे धामनिष्ठजनों का कभी भी अनिष्ट-अमंगल नहीं होता है ।

मान लीला स्थल - मान मंदिर, कोई आश्रम या संस्था विशेष स्थल नहीं अपितु श्री राधा कृष्ण की नित्य लीला स्थली में अति विशिष्ट है। यह है सम्पूर्ण सृष्टि के आराध्य का आराधना स्थल ।
मंदिर जीर्णोद्धार के इस परम पुनीत कार्य में
अपना यथासंभव योगदान देकर अनंत पुण्य के भागी बनें
श्री मान मंदिर
संपर्क :9927338666
www.maanmandir.org
YOUTUBE/maanmandir
(नित्य लाइव सत्संग)
ACCOUNT NAME
SHRI MAAN BIHARI
LAL MANDIR SEVA
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA

वास्तविक रहनी 'श्रीधामाराधना'

निष्ठावान भावुक भक्तों की क्रियात्मक जीवन-रहनी व उनके सत्संग-उपदेशामृत से अन्य श्रद्धालुओं की भी धाम के प्रति निष्ठा-प्रेम-सेवा आदि भावनाओं का संपोषण होता है । श्रीजी के धाम के प्रति प्रगाढ़ प्रेम-निष्ठा का बाबाश्री द्वारा रचित एक रसिया है – **"राधारानी को रंगीलो दरबार, पर्‌यो रह कुंजन में ।"**

लीलाकाल में श्रीजी के करकमलों से निर्मित गह्वरवन की लता-पता, कुंज-निकुंजों आदि का सरस सुव्यवस्थित स्वरूप आज भी सुशोभनीय लगता है । श्रीराधारानी के धाम बरसाना या ब्रज में वास करते समय यदि चोर-डाकू आकर हमला करें, मारे-पीटें, प्राण चला जाए; तब भी इस रसमय धाम को मत छोड़ना । **"मार-धाड़ सबकी तू सहियो"** प्रथम बार जब श्रीबाबामहाराज मानगढ़ पर आये तो यहाँ चोर-डाकुओं द्वारा लूट के माल का बँटवारा होता था । एक दिन वे बरसाने से वस्त्रों की चोरी करके यहाँ लाए, वस्त्रों की सैकड़ों पोटें थीं । उस समय श्रीबाबामहाराज के साथ मानगढ़ पर नीचे के भाग में एक अन्य महात्मा भी रहते थे । पूज्यबाबाश्री ने उनसे पूछा कि ये क्या बँधा रखा है ? उन महात्मा ने कहा – "कुछ बोलो नहीं, वरना मारे जाओगे ।" श्रीमहाराजजी ने समझ लिया कि यह तो अत्यधिक विकृत स्थिति है, उन्होंने तय कर लिया कि भविष्य में मानमंदिर पर ऐसा दुष्कृत्य नहीं होने दिया जाएगा, या तो यहाँ मैं रहूँगा अथवा ये चोर-डकैत निवास करेंगे । श्रीबाबा ने उन महात्मा से कहा कि जब वे दस्यु आधी रात को आयें तो उन्हें मेरे इस संकल्प से अवगत करा देना और मुझे जगा भी देना । श्रीबाबामहाराज की दृढ़ता, उनकी निर्भीकता को देखकर ये चोर-डाकू मानगढ़ से अपनी लूट का सामान उठाकर चले गये और दूसरे महात्मा से कह गये कि श्रीबाबा से कह देना कि हमने मानमंदिर छोड़ दिया है । श्रीबाबामहाराज को विश्वास नहीं हुआ, वह डंडा लेकर टहलने गये तो देखा कि मंदिर के पिछले हिस्से में वे 'लुटेरे' लूट की सामग्री गाड़ कर (छिपाकर) चले गये थे । श्रीबाबा ने पुनः महात्माजी से कहा कि उन चोरों से कह दो कि या तो वे मंदिर को बिल्कुल खाली कर दें अथवा मुझे जान से मार जायें, मैं मृत्यु से नहीं डरता । श्रीबाबा के निरंकुश, अति निडर स्वभाव और श्रीजी की कृपा से इन दस्युओं ने मानगढ़ सदा-सर्वदा के लिए छोड़ दिया; जबकि वे तो अत्यन्त प्रचण्ड थे, बन्दूकें रखते थे परन्तु श्रीजी की इच्छा से वे इस मानलीलाभूमि को छोड़ गये और तब से यहाँ श्रीमानबिहारीलाल का अखण्ड राज्य हो गया । कथनाशय है कि बिना कष्ट सहे कोई उपलब्धि नहीं होती है । इसीलिए ब्रजवास हेतु यह शर्त है –**मार-धाड़ सबकी तू सहियो, भूख प्यास को ध्यान न रखियो** । ब्रज में नया-नया आगमन होने के समय में श्रीबाबामहाराज भिक्षावृत्ति से परिचित नहीं थे, बिना याचना के एक-दो दिन में जो भी खाने को मिल जाता, उसी से उदरपूर्ति कर लेते थे । इसी अयाचक-वृत्ति से वह सम्पूर्ण ब्रजमण्डल में भ्रमण किया करते थे । अयाचक-वृत्ति से ही बाबाश्री नंदगाँव में नन्द-बगीची के निकट तिवारी में रहते थे और नन्दभवन के अन्न क्षेत्र में एक बार जाकर जो भी प्रसाद मिलता, उसी से जीवन-निर्वाह करते हुए कुछ दिन नंदगाँव में भी रहे । ब्रजवास करना है तो कष्ट सहना पड़ेगा; जब ऐसा मन बन जाएगा, तब अवश्य युगल सरकार की कृपा होती है – **"तब कृपा करें सरकार, पर्‌यो रह कुंजन में । राधा राधा रटन लगैयो, तन मन धन सों सेवा करियो, भूख प्यास को ध्यान न रखियो ।"**

ब्रज की सेवा अवश्य करना, यही श्रीचैतन्यमहाप्रभु ने भी कहा था । देखो, सेवा का भाव हृदय में रहेगा तो कोई भी कमी नहीं रहेगी । मानमंदिर द्वारा संचालित श्रीराधारानीब्रजयात्रा में सहयोग करने वाले एक महात्मा ने श्रीबाबामहाराज से एक बार कहा कि ब्रजयात्रा के लिए आप कुछ शुल्क रखिये, नहीं तो भविष्य में निःशुल्क यात्रा का निर्वाह असम्भव है । श्रीबाबा ने सुदृढ़तापूर्वक कह दिया कि शुल्क तो कभी नहीं लूँगा, यात्रा बंद होती है तो हो जाए; धर्म को कभी भी व्यापार नहीं बनाऊँगा । ब्रजयात्रा में प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों का व्यय होता है किन्तु मानमंदिर का कोई सदस्य आज तक किसी के द्वार पर चन्दा माँगने नहीं गया, किसी का दरवाजा इस आशय से नहीं खटखटाया कि तुम हमें कुछ दो - चावल दो, दाल दो, रुपए-पैसा दो; ऐसा कभी किसी से नहीं कहा गया । यहाँ तक कि

'श्रीमाताजी गौशाला' में लगभग ६५ हजार गायें हैं, जिसका एक दिन का खर्च लगभग ३० लाख से अधिक रुपयों का है लेकिन कभी एक पैसे का भी चन्दा नहीं माँगा गया; क्योंकि श्रीजी ही सब कार्य पूर्ण करती हैं, इसके लिए शर्त यही है कि हृदय में सेवा का सच्चा भाव होना चाहिए। मानगढ़ द्वारा ब्रज में अनेकों कुण्डों, सरोवरों आदि का जीर्णोद्धार किया गया, जिनमें करोड़ों की धनराशि का व्यय हुआ। अभी कुछ समय पूर्व ही ब्रज के आदिबद्री तीर्थस्थल में देव-सरोवर का निर्माण किया गया तथा बरसाना में प्रियाकुण्ड के शोधन जैसा असम्भव कार्य पूर्ण किया गया; इनमें भी बहुत अधिक द्रव्य का व्यय हुआ परन्तु कभी किसी से धन की याचना नहीं की गयी। इसलिए भूख-प्यास का ध्यान मत रखो, किसी जीव का आश्रय मत लो, धन की याचना मत करो; चाहे करोड़ों नहीं, अरबों रुपये की धनराशि का व्यय हो जाए, श्रीजी सब कुछ प्रदान करेंगी, अवश्य करेंगी, इसलिए केवल श्रीभगवान् का ही आश्रय पकड़ो, संसारी मनुष्यों का आश्रय कभी भी मत लो –

"तेरो ह्वै जाए बेड़ा पार, पर्‌यो रह कुंजन में।"

श्रीमानमंदिर की आराधिकाओं की निवास-स्थली रसकुञ्ज और आराधना-भवन 'रसमण्डप' के निर्माण में करोड़ों रुपयों का खर्च हुआ किन्तु किसी से धनराशि की याचना अथवा दान के लिए नहीं कहा गया कि हमें इतने धन की आवश्यकता है; इसका यह परिणाम हुआ कि श्रीजी ने बेड़ा पार किया। इसलिए हे भक्तजनों ! राधारानी के इस नित्य रसमय रंगीले दरबार को कभी मत छोड़ना। परम ब्रजनिष्ठ श्रीबाबामहाराज ने 'रसमय बरसाने' को नहीं छोड़ा, एक बार खनन माफियाओं ने बंदूक लेकर हत्या करने के लिए मानगढ़ पर हमला करने की चेतावनी दी किन्तु आज तक कभी कुछ भी हानि नहीं हुई। इसीलिए ब्रज रसिक महापुरुष ने कहा है – **"इन द्वारन सो कबहुँ न हटियो, देहरी पर सिर घिसतो रहियो। रस बरसै धूँआधार, पर्‌यो रह कुंजन में॥"** किसी दूसरे के द्वार का आश्रय मानमंदिर सेवा संस्थान द्वारा कभी नहीं लिया गया, किसी सेठ से सहायता की भीख नहीं माँगी गयी कि तू हमें कुछ दे, ऐसा इस जीवन में कभी भी नहीं हो सकता, क्यों ? क्योंकि बरसाने का एक नाम 'वरषाणा' है अर्थात् यहाँ निरन्तर रस की वर्षा होती है। श्रीराधारानी की ऐसी अनंत महिमा है कि जहाँ वेद भी नहीं पहुँच सकते हैं और कृष्ण के लिए कहते हैं – "कृष्णस्तस्याः कुचमुकुलयोरन्तरैकान्तवासः।" कृष्ण तो एक भौंरे थे जो श्रीराधिका रूपी कमल के भीतर सदा के लिए बंद हो गये, सृष्टि-प्रपंच को छोड़कर उन्होंने एकांतवास ले लिया। फिर "क्काहं तुच्छः परममधमः प्राण्यहो गर्हकर्मा" कहाँ मैं तुच्छ परम अधम प्राणी राधानाम लेने के योग्य हूँ ? मैंने जो श्रीजी का नाम लिया उसका कारण है – **"यत् तन् नाम स्फुरति महिमा ह्येष वृन्दावनस्य॥"** इस ब्रजरज में आने वाला जो भी व्यक्ति है, उसे यह रजरानी अधिकार दे देती हैं कि 'जा तू, राधा-राधा कह' ये यहाँ की मिट्टी का प्रताप है; इस ब्रजभूमि में जो भी आता है, वह सहज में ही राधे-राधे कहने लगता है। इसलिए ब्रजवासीजन कहते हैं कि यहाँ आकर भी जिसने राधा-राधा नहीं कहा, राधा नाम नहीं जाना, उससे ज्यादा अभागा कोई नहीं है, ब्रजवासी गाते हैं – **"जो बरसाने (वृन्दावन) में आयो, जानै राधा नाम न गायो। वाके जीवन को धिक्कार रटे जा राधे-राधे॥"** ऐसी असीम महामहिमान्वित श्रीराधिका के अंचल की सुगन्धित वायु को पाकर अनंत कोटि ब्रह्माण्ड नायक श्यामसुन्दर भी धन्यातिधन्य (परमकृतार्थ) हो जाते हैं। आज भी मानमंदिर के आराधना-भवन 'रसमण्डप' में प्रतिदिन श्रीकृष्ण-रस में निमग्न कर देने वाली रसमयी वर्षा हुआ करती है, हर रोज वहाँ नृत्य-गानमयी कृष्णाराधना होती है, जो श्रीमानमंदिर द्वारा संचालित बड़े-बड़े दिव्य सेवा-कार्यों का मूल शक्ति-स्रोत है अर्थात् सभी कार्य केवल आराधना-शक्ति से हो रहे हैं, अतः भक्तिमयी आराधना ही परमशक्ति है जो साक्षात् श्रीजी का ही स्वरूप है, जिसकी उपासना स्वयं रसिकशेखर श्यामसुन्दर करते हैं; 'श्रीमानगढ़' उसी आराधना-शक्ति का मानभवन है।

अनाराध्य राधापदाम्भोजरेणुमनाश्रित्य वृन्दाटवीं तत्पदाङ्काम्। असम्भाष्य तद् भावगम्भीरचित्तान् कुतः श्यामसिन्धोः रसस्यावगाहः॥

श्रीराधारानी के चरणकमलों की रेणु (रज) की आराधना किये बिना, श्रीजी के चरणचिह्नों से चिह्नित 'श्रीवृन्दावन धाम' का आश्रय लिए बिना तथा श्रीराधारानी के भाव से युक्त गम्भीर चित्त वाले महापुरुषों के सत्संग के बिना कोई श्यामसुन्दर के रस-सिन्धु में अवगाहन कैसे कर सकता है, कृष्ण रंग में कैसे रँग सकता है ?

'श्रीराधा' ही परमाराध्या

सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय विशदरूप से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप चतुर्विध पुरुषार्थों की महिमा का गान करता है और मोक्ष रूप चतुर्थ पुरुषार्थ का वर्णन करके तो अपनी पूर्णता की अनुभूति कर लेता है, परन्तु श्रीमद्भागवत में प्रोज्झित कैतव (१/१/२) कह करके मोक्ष रूप पुरुषार्थ की अभिलाषा का भी सर्वथा निरसन कर दिया, अतः श्रीधरस्वामीपाद उपरोक्त पद्य की व्याख्या में लिखते है-

"**प्रशब्देन मोक्षाभिसन्धिरपि निरस्तः**"

(भावार्थदीपिका१/१/२)

फिर अन्य त्रिविध पुरुषार्थों की तो चर्चा ही क्या ? एवं पञ्चम पुरुषार्थ विशुद्ध कृष्ण प्रेम का प्रतिपादन किया, यही श्रीमद्भागवत का अद्भुत वैशिष्ट्य है जो कि सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय के शिरोमणि के रूप में एवं श्रीकृष्ण के मूर्त विग्रह के रूप में उन्हें प्रतिष्ठापित करता है, इसका प्रमाण है श्रीवेदव्यास जी महाराज का वह आत्मिक संतोष व पूर्णता की अनुभूति, जो श्रीमद्भागवत की संरचना के उपरान्त ही उन्हें प्राप्त हुई । अतः भागवत का प्रतिपाद्य विषय है 'श्रीकृष्णप्रेम' और कृष्णप्रेम की अधिष्ठातृ देवी हैं 'श्रीराधा', तब श्रीराधा तत्व के सन्निवेश के बिना भागवत की पूर्णता कैसे सम्भव है ? अतः श्रीशुकदेवजीमहाराज ने श्रीमद्भागवत में पदे-पदे बड़ी ही गरिमामयी शैली में परन्तु परोक्ष रूप से श्रीजी के स्वरूप (महिमा) का चिन्तन किया है और भागवतोपासक आचार्यों ने अपनी टीकाओं में इस रहस्य को प्रकट किया है एवं परोक्षरूपता अर्थात् स्पष्ट रूप से श्रीराधा नामोच्चारण व श्रीराधा यशोगान न करने के अनेक हेतु भी उपस्थित किये हैं; यथा – (i) श्रीशुकदेवजी का अन्तःकरण अत्यन्त निर्मल है, वे श्रीजी के लालित-पालित शुक हैं एवं श्रीजी के नाम के प्रति उनकी अतिप्रियता है, अतः श्रीराधानामोच्चारण मात्र से श्रीशुक मुनि छः माह की मूर्च्छा को प्राप्त हो जाते हैं -

श्रीराधानाममात्रेण मूर्च्छा षाण्मासिकी भवेत् ।
अतो नोच्चरितं स्पष्टं परीक्षिद्धितकृन्मुनिः ॥

इसमें आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि विशुद्ध हृदय में श्रीयुगलनाम अपनी पूर्ण चमत्कारिता प्रकट करता है, उसी कृष्णनाम को एक सामान्य बद्ध जीव सुनता है तो सद्यः कोई विशेष चमत्कारिता नहीं दिखाई देती है, परन्तु उसी कृष्ण नाम को जब एक गोपी सुनती है तो वह नाम के माधुर्य में सब कुछ भूल जाती है –

कृष्णनाम जबते श्रवण सुन्योरी आली,
भूली री भवन हों तो बावरी भई री ।
भर भर आवें नयन चितहु न परे चैन,
मुख हु न आवे बैन तनकी दशा कछु ओरें भई री ॥
जे तेक नेम धर्म कीनेरी मै बहु विध,
अंग अंग भई हों तो श्रवण मई री ।
'नंददास' जाके श्रवण सुने यह गति,
माधुरी मूरति कैधो कैसी दई री ॥

ऐसी ही उच्चतम अवस्था है महामुनि की, यदि श्रीराधा नामोच्चारण से गोपी जैसी महादशा को वे भी प्राप्त हो जाते, तो कैसे संपन्न होता साप्ताहिक सत्र? और मध्य में कई बार ऐसा प्रसंग आया है जब लीला स्मरण मात्र से समाधिस्थ हो गए श्रीशुक मुनि; यथा –

इत्थं स्म पृष्टः स तु बादरायणिः तत्स्मारितानन्तहृताखिलेन्द्रियः । कृच्छ्रात् पुनर्लब्धबहिर्दृशिः शनैः प्रत्याह तं भागवतोत्तमोत्तम ॥

(श्रीमद्भागवत १०/१२/४४)

सत्र विरमित होता दिखाई दिया तो वहाँ उपस्थित भक्तों ने पुनः उच्च संकीर्तन के माध्यम से बड़े ही दीर्घ प्रयत्न के पश्चात् उन्हें सचेत किया ।

(ii) श्रीशुक श्रीजी से केवल लालित पालित ही नहीं, अपितु पाठित भी हैं, श्रीकृष्णप्रेम की शिक्षा-दीक्षा भी श्रीजी से प्राप्त है उन्हें – **गाढानुराग भर निर्भर भङ्गुराया**
कृष्णेति नाम मधुरं मृदु पाठयन्त्याः ।

(आनन्दवृन्दावनचम्पू ८/४४)

अर्थात् अति प्रेम पुलकित होकर के श्रीजी निरन्तर मधुरातिमधुर श्रीकृष्ण नाम का पाठ पढ़ाती हैं ।

अतः आचार्यों ने श्रीशुक उवाच, इस वाक्य का – '**श्रिया पाठितः शुकः श्रीशुकः**' इस प्रकार मध्यम पद लोपी समास करके अर्थ किया है, यथा – **शाकप्रियो पार्थिवः, शाकपार्थिवः, तथैव श्रिया पाठितः शुकः श्रीशुकः** अतः श्री जी के सच्छिष्य हैं श्रीशुक और शास्त्रों में वर्णित है कि –

आत्मनाम गुरोर्नाम नामातिकृपणस्य च ।
श्रेयःकामो न गृह्णीयात् ज्येष्ठापत्यकलत्रयोः ॥

समर्पित शिष्य को साक्षात् गुरुदेव का नाम नहीं लेना चाहिए क्योंकि महामहिमामय गुरुदेव के नाम की भी एक गरिमा है अतः श्री शुकदेव जी ने मर्यादा की दृष्टि से स्पष्ट नामोच्चारण नहीं किया । (iii) श्रीराधानाम सर्व श्रुतिशास्त्रसार रूप में गृहीत है, सार वस्तु का प्रकाशन सबके सामने सर्वत्र नहीं किया जाता है, अधिकारी के निमित्त ही किया जाता है, जैसे श्रीकृष्ण ने गीता में सर्वगुह्यतम ज्ञान –

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १८/६६)

अर्जुन को प्रदान किया और सावधान किया,

"इदं ते न तपस्काय" (श्रीमद्भगवद्गीताजी १८/६७)

अर्थात् हे अर्जुन ! अतपस्वी, अभक्त और असूयावान इस ज्ञान के अनधिकारी हैं और

"यः इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधाष्यति"

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १८/६८)

अर्थात् मेरे प्रिय भक्त इस गुह्यतम ज्ञान के सर्वथा अधिकारी हैं, उनके समक्ष अवश्य प्रकट करना । अतः यह अधिकारीभेद स्वयं श्रीकृष्ण के द्वारा वर्णित है, इसी प्रकार सार्वजनिक सभा में अधिकारी भेद के कारण श्रीशुक मुनि के द्वारा श्रीराधातत्त्व स्पष्ट वर्णित नहीं है, यद्यपि परीक्षितजी आदि अन्य महर्षि सर्वथा अधिकारी हैं, तथापि कुछ भक्तिशून्य साधनों के आग्रही भी विराजमान थे वहाँ, जिसका संकेत श्रीमद्भागवत में **"संस्थापनाय धर्मस्य"** (श्रीमद्भागवतजी १०/३३/२७) इस श्लोक की टीका में श्रीविश्वनाथचक्रवर्ती आदि आचार्यों ने किया है ।

हमारे शास्त्रों में मुख्यतः तीन पक्ष हैं – १. सिद्धांत २. लीला ३. रस । (सिद्धांत में विचार की, लीला में भाव की व रस में प्रेम की प्रधानता है; प्राथमिक अवस्था में व्यक्ति प्रायः मस्तिष्क प्रधान होता है, हर बात को अपने विचार की कसौटी पर कसना चाहता है अतः सिद्धांत पक्ष की बहुलता है शास्त्रों में । यदि स्वमत-पथ स्थापन की तीव्र लालसा नहीं है या किसी भी प्रकार की हठवादिता नहीं है तो विचार की परिणति भाव में और भाव की परिणति प्रेम में हो जाती है, जो कि आध्यात्मिक जगत् की चरम उपलब्धि है । तीव्र प्रतिभावान व्यक्ति के हृदय में सिद्धान्त के रहस्य प्रकट हो जाते हैं, तीव्र भजनपरायण व्यक्ति के हृदय में लीला के रहस्य प्रकट हो जाते हैं एवं किसी दिव्य लीला परिकर युगल रस रसिक समर्थ सद्गुरु के कृपापात्र तीव्र भजनपरायण अधिकारी जनों के हृदय में रसपक्ष के रहस्य प्रकट होने लगते हैं, अतः सिद्धान्त, लीला, रस (विचार, भाव, प्रेम) उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं, दिव्य हैं, सूक्ष्म हैं । अतः भागवत में प्रथम-नवम स्कंध पर्यंत एवं अंत में एकादश-द्वादश स्कंध में विभिन्न आख्यानों के माध्यम से सिद्धांत को प्रस्तुत किया है और मध्य में दशमस्कंध में लीलापक्ष, और लीला पक्ष के मध्य में रस पक्ष (रासपंचाध्यायी) का वर्णन किया गया है, अतः सर्वशास्त्रसार सिद्धांत, सिद्धांत का सार लीला और लीला का सार रस, अर्थात् विचार का सार भाव, भाव का सार प्रेम और प्रेम की भी परम परिणति महाभाव और महाभाव का सार हैं - वृषभानुनंदिनी श्रीराधा –

प्रेमे परमसार महाभाव जान ।
सेइ महाभावरूपा राधाठकुरानी ॥ (श्रीचैतन्यचरितामृत)

अतः निखिललोक चूडामणि श्रीकृष्ण भी जिनके चरणों में प्रपन्न होकर गौरवान्वित होते हैं –

श्रीराधिके तव कदा चरणारविन्दं गोविन्दजीवनधनं शिरसा वहामि ॥ (श्रीराधासुधानिधि)

अथवा

देहि पदपल्लवमुदारम् । (गीतगोविन्द)

ऐसे सर्वशास्त्रसारातिसार श्रीराधातत्त्व के प्रति अतिगौरव बुद्धि होने के कारण श्रीशुकदेव जी ने स्पष्ट उच्चारण नहीं किया, अतः श्रीहरिरामव्यासजी गाते हैं –

परम धन राधा नाम अधार ।
जाहि श्याम मुरली में टेरत सुमिरत बारंबार ॥
श्रीशुक प्रगट कियौ नहीं तातें, जान सार को सार ॥

(श्रीव्यासवाणी)

परन्तु परोक्ष रूप से विस्तार से श्रीजी की लीलाओं (स्वरूप) का चिंतन किया है क्योंकि भागवत पञ्चम पुरुषार्थ विशुद्ध कृष्णप्रेम प्रधान ग्रन्थ है और कृष्णप्रेम (रस) की अधिष्ठातृ देवी हैं श्रीराधारानी अतः उनके बिना भागवत की रसवत्ता व सर्वशास्त्र श्रेष्ठवत्ता सिद्ध नहीं हो सकती है इसलिए भागवतोपासक आचार्यों ने इस रहस्य को प्रकट

किया है, यथा-सर्वप्रथम मंगलाचरण में श्रीशुक मुनि ने श्रीजी के गरिमामय स्वरूप का चिन्तन किया है –

नमो नमस्तेऽस्त्वृषभाय सात्वतां
विदूरकाष्ठाय मुहुःकुयोगिनाम् । निरस्तसाम्यातिशयेन
राधसा स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥

(श्रीमद्भागवत २/४/१४)

इस पद्य की व्याख्या में भागवत के प्रख्यात टीकाकार आचार्य वंशीधर जी लिखते हैं, - **स्वधामनि वृन्दावने राधसा राधया सह रंस्यते क्रीडते कीदृशो स्वधामनि ब्रह्मणि सर्वोत्कृष्टे 'लोकेषु पृथ्वी धन्या तत्र वृन्दावनं महत्' किं भूतेन राधसा निरस्तौ साम्यातिशयौ तौल्याधिक्ये यस्य तेन 'न राधा सदृशी काचिद्देवताभ्यधिका कुतः । अनेककोटिब्रह्माण्डपतिर्यस्या वशे हरिः ॥' इत्यादिपुराणवत् । सान्तोऽपि राधधातुनिष्पन्नो राधः शब्दो राधावाचकः समानार्थप्रत्ययनिष्पन्नत्वात् ।**

(भावार्थदीपिकाप्रकाश)

अर्थात् दिव्य श्रीमद्वृन्दावनधाम में **"निरस्त साम्यातिशय"** – समस्त चिदचित् जगत में कोई भी जिनके सौंदर्य, माधुर्य, लावण्य, वैदग्ध्य, कारुण्य आदि की समता ही नहीं कर सकता फिर अतिशयता तो कैसे संभव है यथा श्रीव्यास जी महाराज लिखते हैं –

राधिका सम नागरी नवीन को प्रवीन सखी,
रूप गुन सुहाग भाग आगरी न नारि ।
वरुन नागलोक भूमि देवलोक की कुमारि,
प्यारीजू के रोम ऊपर डारौं सब वारि ॥

ऐसी श्रीराधारानी के साथ लीलापरायण श्रीराधा रमण लाल को प्रणाम । यहाँ राध् आराधने धातु से निष्पन्न राधस् शब्द राधा पद वाचक ही है, समानार्थ प्रत्यय से निष्पन्न होने के कारण ।

इसी प्रकार राधाष्टमी पर श्रीजी की प्राकट्य दिवस की लीला का स्मरण किया है यथा –

तत आरभ्य नन्दस्य व्रजः सर्वसमृद्धिमान् ।
हरेर्निवासात्मगुणै रमाक्रीडमभून्नृप ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/५/१८)

प्रस्तुत पद्य की व्याख्या में आचार्यों ने रमा शब्द का अर्थ श्री राधा किया, क्योंकि ब्रज रस में रमा शब्द का अर्थ लक्ष्मी नहीं है जैसे –

शेष महेष सुरेश न पावै, अज अजहुँ पछिताय ।
सो सुख रमा तनक नही पावत, *जदपि पलोटत पाय* ॥

(श्रीनन्ददासजी)

अथवा

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः स्वर्योषितां
नलिनगन्धरुचां कुतोऽन्याः । (श्रीमद्भागवत १०/४७/६०)

अथवा

यद्वाञ्छया श्रीर्ललनाऽऽचरत्तपो
विहाय कामान् सुचिरं धृतव्रता ॥ (श्रीमद्भागवत १०/१६/३६)

अतः आचार्यचरण लिखते हैं –

(i) नायं श्रियः इत्याद्युक्तरीत्या वैकुण्ठश्रीतोऽपि व्रजदेवीनामेव परमरमात्वोक्तेस्तासामपि परम रमा श्रीराधा तस्य अपितदानीमाविर्भावात् तस्याश्च क्रीडास्थानं तदारभ्याभूदिति । (भीवार्थदीपिकाप्रकाश)

(ii) श्रीकृष्णजन्मआरभ्य रमाणां श्रीराधादीनां आक्रीडं विहारास्पदमभूत् तज्जन्मानान्तरं तासाञ्च जन्माभूदित्यर्थः ।

(श्रीवैष्णवनन्दिनी)

(iii) ब्रजदेवीनां परं रमा रूपाणां तासामपि परं रमायाः श्रीराधायाश्च तदानीमेवाभिर्भावात् विहारस्थानमपि बभूव ।

(श्रीवैष्णवतोषिणी)

इस प्रकार से श्रीराधारानी की प्राकट्य लीला का चिंतन श्रीशुकदेवजी ने किया है, भाद्रपद कृष्ण अष्टमी (जन्माष्टमी) में श्रीकृष्ण जन्मोत्सव मनाया गया और ठीक १५ दिन बाद भाद्रपद शुक्ल अष्टमी (राधाष्टमी) के पावन पर्व पर प्रभात की वेला में श्रीधाम बरसाना में श्रीवृषभानुबाबा के भवन में श्रीकीर्ति मैया के यहाँ श्रीराधारानी का प्राकट्य हुआ, रसिक महापुरुषों ने अपनी वाणियों में गाया –

चलौ वृषभान गोप के द्वार ।
जन्म लियौ मोहन हित स्यामा आनन्द निधि सुकुमार ॥

(श्रीहित स्फुटवाणी)

आजु बरसानें बजत बधाई ।
भाग बड़े कीरति रानी कें ऐसी कन्या जाई ॥
दुंदुभि ढोल भेरी सहनाई बाजन बाजत द्वारे ।
श्रीवृषभानु राइजू की पौरी धूम मची अति भारे ॥
दान देत वृषभानु भाँवते जो जाचत तिहि काल ।
'कृष्णदास' सब देत असीसै-चिर जीवौ यह बाल ॥

(श्रीकृष्णदासजी)

और सभी ब्रजवासियों ने बड़े ही उत्साह से श्रीजी का जन्मोत्सव मनाया अर्थात् नन्दोत्सव में जो आनंद आया उससे भी द्विगुणित आनंद और रस वर्षण श्रीजी के प्राकट्योत्सव में हुआ –

जो रस नंद भवन में उमग्यो ताते दूनो होत री ॥

(श्रीसूरदासजी)

१. इसी प्रकार वेणुगीत में श्रीजी की कैशोर लीला का दर्शन करते हैं श्रीशुकदेव जी -

अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदामः सख्यः पशूननु विवेशयतोर्वयस्यैः । वक्त्रं व्रजेशसुतयोरनवेणुजुष्टं यैर्वा निपीतमनुरक्तकटाक्षमोक्षम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/२१/७)

प्रस्तुत पद्य में व्रजेशसुतयोः इस वाक्य में इतरेतर द्वंद्व समास करके अर्थ करते हैं श्रीनाथचक्रवर्ती जी व्रजेशसुतयोः अर्थात् राधाकृष्णयोः ।

श्रीराधायाः सहचर्यं एव प्रथममाहुः – हे सख्यः ! ब्रजेशसुतयोर्वक्त्रं यैः पीतम् तदेव तेषामक्षिफलम् । व्रजेशश्च व्रजेशश्च व्रजेशौ श्रीकृष्ण-राधा-पितरौ स्थले स्थले दर्शनीयौ तयोः सुतश्च सुता च व्रजेश सुतौ राधाकृष्णौ तयोः व्रजेशसुतयोः राधाकृष्णयोः उभयोः उभयं वक्त्रं यैः पीतम् ।

(श्रीनाथचक्रवर्तीपादविरचिता चैतन्यमतमञ्जूषा)

अर्थात् श्रीजी की सहचरियाँ कहती हैं - हे सखियो ! वस्तुतः नेत्रवान् तो वही है जो व्रजेशनंदिनी अर्थात् वृषभानुनंदिनी श्रीराधा और व्रजेशनंदन अर्थात् नन्दनंदन श्रीकृष्ण के असमोर्ध्व सौन्दर्यागार श्रीमुखचन्द्र का अपने नेत्रयुगल से निरन्तर पान करते हैं, श्रीभट्टदेवाचार्यजी की वाणी में –

बसो मेरे नैनन में दोउ चंद ।
गौर बरन वृषभान नंदिनी, स्याम वरन नंद नंद ।

(श्रीयुगलशतक)

२. अग्रिम क्रम में मादनाख्य भाव में अवस्थित स्वयं श्रीजी वेणु के सौभाग्य का दर्शन कर सखियों से कहती हैं –

गोप्यः किमाचरदयं कुशलं स्म वेणु -
र्दामोदराधरसुधामपि गोपिकानाम् ।

(श्रीमद्भागवतजी १०/२१/९)

अर्थात् हे सखियो ! इस वंशी ने न जाने कौन-सा तीक्ष्ण तप किया है, जिसके फलस्वरूप यह नित्य-निरन्तर हम ब्रजवामाओं के सर्वस्व श्यामसुन्दर की अधरसुधा का पान करती रहती है, यह श्लोक श्रीजी के मुखारविन्द से प्रकट हुआ है क्योंकि श्रीसनातनगोस्वामीजी परवर्ती पद्य **"वृन्दावनं सखिभुवो"** (श्रीमद्भागवतजी १०/२१/१०) की टीका में लिखते हैं –

हे सखीति कृष्णप्रदत्ततदाधिपत्येन तव तु परमधन्यतैवेति पूर्वश्लोकेन स्वयं वर्णिताद् वेणुभाग्याज्जातशोकां भगवतीं श्रीराधां प्रति ललितादि तदीय सखी वर्गकृत सान्त्वनामिदं ज्ञेयम् । (वृहद् वैष्णवतोषिणी)

(३) अग्रिम क्रम में

पूर्णाः पुलिन्द्य उरुगायपदाब्जरागश्रीकुङ्कुमेन दयितास्तनमण्डितेन । (श्रीमद्भागवतजी १०/२१/१७)

प्रस्तुत पद्य में दयिता शब्द वाच्या श्रीराधा ही हैं । श्रीजीव गोस्वामी जी लिखते हैं – **सा च दयिता श्रीपदेनानूदिता तदिदं वर्णयन्तीषु तास्वपि विशिष्टा रुक्मिणी द्वारवत्यां तु राधावृन्दावने वने इति मत्स्याद् प्रसिद्धा श्रीराधैव लभ्यते ।**

(श्रीवैष्णवतोषिणी)

दयितायाः श्रीराधायाः स्तनाभ्यां स्तनयोर्वामण्डितेन ।

(वृहत्क्रमसन्दर्भ)

क्योंकि श्रृंगार रस में दयिता शब्द का प्रयोग अति प्रीति पात्रा के प्रति ही किया जाता है और श्रीजी श्यामसुन्दर की अतिप्रीति पात्रा हैं, स्वयं श्रीकृष्ण श्रीजी के प्रति अपनी इस अतिप्रियता के भाव को प्रकट करते हैं –

त्वमसि मम भूषणं *त्वमसि मम जीवनं*
त्वमसि मम भवजलधरत्नम् ।
भवतु भवतीह मयि सततमनुरोधिनी
तत्र मम हृदयमतियत्नम् । प्रिये चारुशीले० ।

(श्रीगीतगोविन्द)

रासपंचाध्यायी के प्रकरण में तो अतिविस्तार से श्रीजी की महिमा का गान किया गया है क्योंकि रासेश्वरी की कृपा से ही रासरस सम्भव है । अतः सर्वप्रथम श्रीकृष्ण रासेश्वरी श्रीराधा की कृपा का आश्रय लेते हैं –

भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः ।
वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/२९/१)

अर्थात् सम्पूर्ण षडैश्वर्य संपन्न भगवान् श्रीकृष्ण के मन में जब रास की अभिलाषा जाग्रत हुई तब उन्होंने योगमायामुपाश्रितः – संपूर्ण संयोग श्रृंगार की शोभा की

सीमा श्रीराधारानी का आश्रय लिया । आचार्यचरण अर्थ करते हैं –

(i) योगस्य संयोगस्य मायो मानं पर्याप्तिर्यस्यां सा योगमाया श्रीराधा ।

(ii) योगस्य संयोगस्य मा लक्ष्मीः संपत्तिरिति यावत् तां याति प्राप्नोतीति योगमायां श्रीराधैव तां मनसा उपाश्रितः ॥ (वृ.वै.तो.)

(iii) योगमाया राधिका रन्तुमनश्चक्रे यामाश्रितो यदधीनो भगवानपि इति वा । (सुबोधिनी)

(iv) युज्यते इति योगा श्रीराधा तस्याः कृपां उप आधिक्येन आश्रितः ।

रासेश्वरी श्रीराधा का आश्रय ग्रहण कर वेणुवादन किया, वेणु की ध्वनि को सुनकर सभी गोपियाँ आईं, परन्तु श्यामसुन्दर ने देखा अभी रासेश्वरी राधा नहीं आईं अतः उनकी प्रतीक्षा में श्यामसुन्दर के द्वारा गोपियों की प्रीति की परीक्षा और उत्तर के रूप में गोपियों के द्वारा प्रणयगीत का गान किया गया, परीक्षा के व्याज से श्रीजी की प्रतीक्षा कर रहे हैं श्यामसुन्दर; प्रतीक्षित श्यामसुन्दर की दशा का वर्णन जयदेव स्वामी जी ने किया है –

***पतति पतत्रे*विचलति पत्रे शंकितभवदुपयानम् ।**
रचयति शयनं सचकितनयनं पश्यति तव पंथानम् । धीर समीरे ०।

सचकित नयनों से श्यामसुन्दर श्रीजी के आगमन पथ को निहार रहे हैं, उसी क्षण श्रीजी निजयूथ के साथ वहाँ आईं और तब श्रीश्यामसुन्दर ने रास प्रारम्भ किया । यह भाव रासप्रबन्ध नामक ग्रन्थ में श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती पाद ने प्रस्तुत किया है ।

रास आरम्भ हुआ और उसी समय गोपियों के मन में किंचित् सौभगमद जाग्रत हुआ, हम भी श्रीजी के समान हैं अतः उसी प्रकार से श्यामसुन्दर हमें सम्मानित कर रहे हैं (श्रीमद्भागवतजी १०/२९/४७) एवं श्रीराधा के मन में मान का उदय हुआ; प्रेम की विकसित व संकुचित अवस्था को ही क्रमशः मान व मद कहते हैं –

तासां तत् सौभगमदं वीक्ष्य मानं च केशवः ।
प्रशमाय प्रसादाय तत्रैवान्तरधीयत ॥

(श्रीमद्भागवत १०/२९/४८)

वयं श्रीराधा समा यतोऽस्मानपि तत्सदृशमेव मनुता इत्यतस्तासां सौभगमदं सम्मानविशेषं च श्रीराधायाः मानं च वीक्ष्य – मानं च प्रशमनाय श्रीराधायाः प्रसादाय तत्रैव कृष्णाटते वान्तरधीयत । ताश्चसाः चेत्येकशेषेण तासां व्रजसुन्दरीणां तस्याः वृषभानुकुमार्याश्च क्रमेण तत् तं सौभगमदं मानं च वीक्ष्य ॥ (भावार्थदीपिकाप्रकाश), (सारार्थदर्शिनी)

यहाँ **"तासाम्"** पद में एकशेष करके श्रीराधा और व्रजगोपियाँ दोनों का ही ग्रहण है, अतः श्रीजी के मान के प्रसादन के लिये, गोपियों के मद के प्रशमन के लिये, श्रीजी के सहित अन्तर्हित हो गए श्यामसुंदर, श्रीजीव गोस्वामीजी भी **"अयं वक्ष्यमाणानुसारेण श्रीराधयैव सहान्तर्धानं ज्ञेयम्"** (वैष्णवतोषिणी)

इस प्रकार से व्याख्या करते हैं । विरह व्यथित गोपियों ने वन वनान्तरों में अन्वेषण किया, वृक्ष लता आदि से पूछा, लीलानुकरण किया और तब गोपीवृन्द ने प्यारे श्रीकृष्ण के चरणचिन्हों का दर्शन किया, और आगे चलकर श्रीकृष्ण के साथ मिले हुए किसी व्रजांगना (श्रीराधा) के चरणचिन्हों का भी दर्शन किया –

तैस्तैः पदैस्तत्पदवीमन्विच्छन्त्योऽग्रतोऽबलाः ।
वध्वाः पदैः सुपृक्तानि विलोक्यार्ताः समब्रुवन् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/२६)

यहाँ 'वधू' शब्द का अर्थ आचार्यों ने किया –

(i) वध्वाः श्रीराधायाः तस्याः एव परम सौभाग्यवतीत्वेन स्थापयिष्यमाणित्वात् । (वैष्णवतोषिणी)

(ii) श्रीयशोदायाः मनोरथविशेषेण वधूरिति कदाचित् तन्मुखोद्गत्या गोकुले वधुत्वेन प्रसिद्धायाः श्रीराधायाः एव तन्नामाग्रहणकारणं लिखितमेव । (वृहद् वैष्णवतोषिणी)

अर्थात् यहाँ वधू पद से श्रीराधा ही बोध्या हैं क्योंकि अग्रिम पद्यों में उनका अति सौभाग्यवतीत्व स्थापित है एवं श्रीयशोदा जी के मन में भी बडी प्रबल इच्छा है कि श्रीराधा हमारी पुत्रवधू बने और यह बात उनके मुख से गोकुल में कई बार प्रकट भी हुई अतः गोकुल में श्रीकृष्ण वधूत्वेन श्री राधा ही प्रसिद्ध हैं; अन्यच्च ब्रह्मवैवर्त पुराण व गर्ग संहिता आदि के अनुसार भी भांडीरवन में श्रीब्रह्मा जी के द्वारा इन नित्य सिद्ध दम्पत्ति श्री राधामाधव का विधिवत् विवाह सम्पन्न कराया है, अतः ये श्रीकृष्ण की नित्य वधू हैं । इस प्रकार श्यामसुन्दर के साथ मिले हुए श्रीजी के चरणचिन्हों

को सुहृद् पक्ष की सखी ललिता विशाखा आदि के द्वारा पहचान लिया गया और मन ही मन वे श्रीजी के सौभाग्य का दर्शन कर प्रहर्षित होती हुई उनकी सराहना करती हैं –

अनयाऽऽराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः ।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद् रहः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/२८)

अर्थात् इस आराधिका ने निश्चित ही अपने सच्चे प्रेम से प्रियतम का आराधन किया है, अतः श्यामसुन्दर हमें छोड़कर के इसके साथ अन्तर्हित हो गए । यह आराधिका कोई और नहीं अपितु साक्षात् श्रीराधारानी ही हैं क्योंकि सच्चे प्रेम की परिभाषा श्रीजी ही जानती हैं –

प्रीति की रीति को पैंडो ही न्यारो ।
कै जाने वृषभानुनन्दिनी, कै जाने वह नन्द दुलारो ॥

(श्रीसूरदासजी)

और राधा नाम का कारण भी यहाँ प्रकट हो गया, जो सर्वदा कृष्ण का आराधन करती हैं एवं श्रीकृष्ण सर्वदा जिनसे आराधित हैं –

अनयैव आराधितः आराध्यः वशीकृतः न त्वस्माभिः राधयति आराधयति इति राधा इति नामकारणञ्च दर्शितम् ।

(वैष्णवतोषिणी), (वृहद्वैष्णवतोषिणी)

अर्थात् जिनकी प्रेममयी आराधना से श्यामसुन्दर सर्वथा जिनके अधीन हैं, वशीकृत हैं, वह हैं राधा ।

लालन तेरेई आधीन ।
***तेरे* रस बस श्यामसुंदर वर, जाचत हैं ज्यौं दीन ॥**

(श्रीविट्ठलविपुलदेवजी)

यहाँ यद्यपि श्रीशुक मुनि ने बड़ा ही गोपन किया श्री राधा नाम का परन्तु उनके मुख से राधा नाम निकल ही गया –

"राधयतीति राधेति नाम व्यक्तिबभूवेति मुनिप्रयत्नेन तदीय नामाप्यधात् परं किन्तु तदास्यचन्द्रात् स्वयं निरेति स्म कृपा तु तस्याः सौभाग्यं भेर्या इव वादनार्थं"

(भावार्थदीपिकाप्रकाश)

प्रस्तुत पद्य का एक अन्य अर्थ भी किया है आचार्यों ने –

हे अनयाः ! अतिमहीयस्याः तया सह वृथैव साम्याहङ्कारादनीति मत्यः नूनं हरेरियं राधितः राधां इतः प्राप्तः शकन्ध्वादित्वात् पररूपं ।

(सारार्थदर्शिनी), (भावार्थदीपिकाप्रकाश), (अन्वितार्थ प्रकाशिका)

अर्थात् सुहृत् पक्ष की सखियाँ - प्रतिपक्ष की चंद्रावली आदि से कहती हैं कि हे अनयाः ! अर्थात् अति श्रेष्ठा स्वामिनी जी के साथ वृथा साम्य अहंकार रखने वाली अनीतिमती गोपियो देखो, निश्चित ही हरि राधा को प्राप्त हैं ।

राधां इतः (प्राप्तः) (इण् गतौ धातु से क्त प्रत्यय करके इतः शब्द बना, गति के चार अर्थ – गमन, ज्ञान, मोक्ष व प्राप्ति तो यहाँ प्राप्ति अर्थ अभीष्ट है,) अतः, राधाम् इतः प्राप्तः अर्थात् राधा को नित्य प्राप्त हैं । द्वितीया तत्पुरुष समास, विभक्ति लोप एवं शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यं इस वार्तिक से पररूप करके राधित शब्द सिद्ध होता है ।

आगे श्रीशुकदेव जी ने स्कन्धारोहण (१०/३०/३१,३२), पुष्पचयन (१०/३०/३३), वेणीगुम्फन (१०/३०/३४), मानमनावन (१०/३०/३५) आदि लीलाओं का अति रसात्मक और रहस्यात्मक ढंग से वर्णन किया है और इनका आस्वादन विस्तार से रसिक महानुभावों ने अपने वाणी ग्रंथों में किया है ।

उपरोक्त लीलाओं के उपरान्त करुणामयी श्रीकिशोरीजी का मन गोपियों की विरह व्यथा का स्मरण कर अतिद्रवित हो गया और उन्होंने सोचा मुझे गोपियों की सहायता करनी चाहिए, श्यामसुन्दर ऐसे गोपियों से नहीं मिलेंगे, मुझे ही मिलाना होगा, इसलिए मैं चलने में कुछ विलम्ब करूँ, मेरे विलंबित होने पर ये भी शनैः शनैः चलेंगे तब तक गोपियाँ आ जायेंगी –

सा च मेने तदाऽऽत्मानं वरिष्ठं सर्वयोषिताम् ।
हित्वा गोपीः कामयाना मामसौ भजते प्रियः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/३७)

इस पद्य की व्याख्या श्रीजीव गोस्वामी पाद करते हैं – **सर्वाः मामसौ भजते प्रधानजनस्य नैतदुचितं तर्हि अहमत्रैव बिलम्बयामि यावत् सर्वाः मिलन्ति यद्यहं न चलामि तदा अयमपि न चलिष्यति तावत्ताः अपि सर्वाः मिलिष्यन्ति ।**

(वृहत्क्रमसन्दर्भ)

अतः श्रीजी ने श्रांता होने का अभिनय किया और कहा कि मैं अब आगे चलने में समर्थ नहीं हूँ, श्यामसुन्दर ने कहा – **एवमुक्तः प्रियामाह स्कन्ध आरुह्यतामिति ।**

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/३९)

आप पूर्व की भाँति स्कंधारूढ़ हो जाएँ, जैसे ही श्रीजी स्कन्धारूढ़ होने के लिये उद्यत हुई वैसे ही श्री जी के मन में

प्रेम वैचित्री जन्य विरह व्याप्त हो गया । प्रेम वैचित्री जन्य विरह का तात्पर्य है –

प्रियस्य सन्निकर्षेऽपि प्रेमोन्मादभ्रमाद्भवेत् ।
या विश्लेषधियार्तिस्तत्प्रेमवैचित्त्यमुच्यते ॥

(उज्जवलनीलमणि)

प्रेम की अत्यन्त उत्कर्षमयी अवस्था है प्रेमवैचित्री, जिसमें प्रियतम से नित्य संयोग होते हुए भी वियोग-बुद्धि हो जाती है । जैसे सुधानिधिकार ने वर्णन किया है –

अङ्कस्थितेऽपि दयिते किमपि प्रलापं
हा मोहनेति मधुरं विदधत्यकस्मात् ।

(श्रीराधासुधानिधि - ४६)

यह प्रेम वैचित्री जन्य विरह केवल श्रीजी में ही घटित होता है क्योंकि श्रीजी प्रेम की सर्वोच्च अवस्था महाभाव स्वरूपा हैं, जैसे ही श्रीजी को प्रेम वैचित्री जन्य विरह व्याप्त हुआ, श्यामसुन्दर वहीं विराजमान होकर श्रीजी को समझाने का प्रयत्न करते हैं, इतने में अन्वेषण करता हुआ गोपियों का एक यूथ वहाँ पहुँचता है और गोपियों को देखते ही श्यामसुन्दर अन्तर्हित हो जाते हैं । अति विरह की अवस्था में श्रीजी ने श्यामसुन्दर को पुकारा –

हा नाथ रमण प्रेष्ठ क्वासि क्वासि महाभुज ।
दास्यास्ते कृपणाया मे सखे दर्शय सन्निधिम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/४०)

गोपियों ने जब श्रीजी के विरह का दर्शन किया तो परम विस्मय को प्राप्त हो गईं । इस लीला का तात्पर्य श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती जी प्रेमसम्पुट नामक ग्रन्थ में वर्णन करते हैं कि श्रृंगार रस के दो पक्ष हैं, सम्प्रलम्भ और विप्रलम्भ; गोपियों के मन में प्रथम सम्प्रलम्भ जन्य श्रृंगार का अभिमान आया, अर्थात् जितना श्यामसुन्दर हमें चाहते हैं उतना किसी को नहीं चाहते हैं, इस अभिमान को दूर करने के लिये श्रीकृष्ण श्रीजी के साथ अन्तर्हित हो जाते हैं । तब गोपियों ने सोचा निश्चित ही श्यामसुन्दर जितना श्रीजी को चाहते हैं उतना किसी को नहीं चाहते । अतः उनके लिये हम सबको त्याग दिया । अब जब दूसरे क्षण गोपियों को वियोग का विरह व्याप्त हुआ तो सोचने लगीं कि जितना हम श्यामसुन्दर से प्रेम करती हैं, उतना कोई नहीं कर सकता, देखो कितना तीव्र विरह व्याप्त है हमारे मन में, यह विप्रलम्भ जन्य अभिमान हुआ, इसकी निवृत्ति के लिये श्यामसुन्दर ने श्रीजी के विरह का दर्शन कराया –

वैश्लेषिकज्वरमपारमतुल्यमस्याः
सन्दर्श्य विस्मयमहाब्धिषु मज्जितानाम् ।
स्वप्रेमगर्वमपि निर्धुनवान्यथैना-
न्ताभिर्महाधिक तमामनुभावयामि ॥ (प्रेमसंपुट- ८४)

जब गोपियों ने देखा –

ददृशुः प्रियविश्लेषमोहितां दुःखितां सखीम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/३०/४१)

कि श्रीजी श्याम के अन्तर्हित होते ही (एक पग भी नहीं चल पाई और) वहीं मूर्छित हो गईं, तब गोपियों ने सोचा कि देखो, हम तो कम से कम लीलाभिनय या वन-वनान्तर में अन्वेषण तो कर रही हैं, यह तो एक पग भी नहीं चल पायीं, ऐसा तीव्र विरह व्याप्त है इनमें, निश्चित ही जितना श्रीजी श्यामसुन्दर से प्रेम करती हैं उतना कोई भी नहीं कर सकता । वस्तुतः ये दोनों ही अभिन्न हैं, दोनों ही चकोर और चन्द्रमा हैं । श्रीराधामुखचन्द्र के चकोर हैं श्रीकृष्ण एवं श्रीकृष्णमुखचन्द्र की चकोरी हैं श्रीराधा –

"परस्पर दोउ चकोर दोउ चन्दा ।
दोउ चातक दोउ स्वाती, दोउ घन दोउ दामिनी अमंदा ॥"

(श्रीभगवद्रसिकजी)

अन्त में श्रीजी के साथ मिलकर गोपी-गीत का गान किया गया, श्यामसुन्दर प्रकट हुए और दिव्य महारास क्रीड़ा सम्पन्न हुई । कथनाशय है कि श्रीमद्भागवत में विपुल रूप से श्रीशुकदेवजी ने श्रीजी के चरित्र का गान किया है क्योंकि प्रेम, रस, माधुर्य का एकमात्र अधिष्ठान हैं श्रीराधा; ऐसे दिव्य श्री राधा तत्त्व के सन्निवेश के बिना श्रीमद्भागवत का प्रोज्झित कैतव रूप परमधर्म व 'रसमालयम्' स्वरूप सिद्ध नहीं हो सकता । उस दिव्यातिदिव्य महामहिमामय श्रीराधालीलासिन्धु का पार प्रातिभ बल (मति) के आधार पर कौन प्राप्त कर सकता है अर्थात् कोई नहीं ....

"क्वासौ राधा निगम पदवी दूरगा ...। "

(श्रीराधासुधानिधि – २६०)

उसी दिव्यलीलासिन्धु के कुछ बिंदु भगवद्स्वरूप आचार्य महापुरुषों की वाणी के आधार पर यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है ।

सबसे सरस 'राधा नाम'

श्रीरमणरेती में हुए बाबाश्री के वक्तव्य (३०/१०/२०२२) से संकलित

पृथ्वी के समस्त तीर्थ तो ब्रज में ही श्रीराधारानी के चरणकमलों में स्थित हैं, जैसा कि ब्रजनिष्ठ महापुरुषों का कथन है –

कीरतिसुता के पग-पग में प्रयाग जहाँ,
केशव की कुञ्ज-केलि कोटि-कोटि काशी हैं ।
यमुना में जगन्नाथ रेणुका में रामेश्वर,
बद्री-केदारनाथ फिरत दास-दासी हैं ॥

पृथ्वी के समस्त तीर्थ अपने उद्धार के लिए ब्रजभूमि में आते हैं, इसलिए ब्रज में निवास करने वालों को ब्रज के बाहर स्थित तीर्थों में जाने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

श्रीराधारानी के धाम बरसाना, गह्वरवन में कन्यायें (आराधिकाएँ) अखण्डवास कर रही हैं और नित्य रसमय गान और नृत्य के माध्यम से प्रिया-प्रियतम की आराधना करती हैं । श्रीजी के करकमलों द्वारा निर्मित गह्वरवन में सैकड़ों की संख्या में इन साध्वियों के द्वारा प्रतिदिन जो नृत्य-आराधना की जाती है, ऐसा भारत तो क्या विश्व में कहीं नहीं है । वस्तुतः ब्रज में आराधना तो नृत्य की पद्धति द्वारा ही की जाती है । सम्पूर्ण विश्व में महारास प्रसिद्ध हुआ, क्यों प्रसिद्ध हुआ ? उस त्रिगुणातीत महारास में रासमण्डल पर रासेश्वरी श्रीराधिकारानी विराजती हैं और अनन्त गोपिकाओं के मध्य श्रीजी को प्रसन्न करने व उनकी आराधना हेतु स्वयं रासेश्वर श्रीश्यामसुन्दर नृत्य करते हैं; ऐसा संसार के इतिहास में आज तक कभी घटित नहीं हुआ, यह अत्यधिक आश्चर्यजनक है । इस लीला में कोई मर्यादा नहीं है । मर्यादा क्या होगी, जब स्वयं त्रिलोकीनाथ 'रासेश्वरी' की नृत्य-गान करके आराधना करते हैं । भगवान् ने ब्रजलीला के अन्तर्गत समस्त लौकिक-वैदिक मर्यादाओं को तोड़ दिया और अनन्त जगत् को यह दिखाया कि श्रीराधारानी ही मेरी इष्ट हैं; उन्हीं वृषभानुनन्दिनी श्रीकिशोरीजी का गाँव है 'बरसाना', इस तथ्य से सभी अवगत हैं । अतएव उस बरसाने में जो कन्यायें प्रतिदिन श्रीजी की आराधना करती हैं, उन्हें व्यासगद्दी पर बैठने का अधिकार नहीं है – ऐसा कहने वाला न तो श्रीजी का उपासक है, न था और न कभी होगा । जहाँ परमेश्वर श्रीकृष्ण की आह्लादिनी शक्ति, उनकी आत्मस्वरूपा 'श्रीराधिकारानी' साक्षात् विराजती हैं, वहाँ समस्त मर्यादायें समाप्त हो जाती हैं । सुधानिधिकार ने राधारानी की आराधना करने वाले (राधाराधक) कृष्ण को वन्दन किया है –

रसघनमोहनमूर्तिं विचित्रकेलिमहोत्सवोल्लसितम् ।
राधाचरणविलोडितरुचिरशिखण्डं हरिं वन्दे ॥

(श्रीराधासुधानिधि - २००)

भगवान् श्यामसुन्दर रसघनमोहनमूर्ति हैं, वे अद्भुत रसमयी केलि किया करते हैं किन्तु उनके मस्तक पर जो मयूरपंख सुशोभित है, जिसके कारण वे विश्वविख्यात हुए, वह मयूरपंख भी केवल भगवान् श्यामसुन्दर ही धारण करते हैं, अन्य किसी भी अवतार में प्रभु ने मयूरपंख धारण नहीं किया ।

कृष्णावतार में ही मोरपंखधारी श्रीप्रभु राधिकारानी के चरणों में विलोडन करते हैं – 'राधाचरणविलोडितरुचिरशिखण्डं हरिं वन्दे' – ऐसे श्रीकृष्ण की हम उपासना करते हैं । ऐसी स्थिति में वहाँ मर्यादा कहाँ है ? मर्यादा केवल यही है कि श्रीराधारानी की आराधना करो, जिनकी आराधना अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड नायक श्रीकृष्ण कर रहे हैं, तब फिर वहाँ क्या संदेह है और इसीलिए उनको सर्वेश्वरी कहा गया है । सर्वेश्वर भगवान् की भी जो ईश्वरी हैं, वे हैं श्रीराधारानी । इसलिए मान मन्दिर की श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में न कोई मर्यादा है, न कोई शुल्क है । धन के बिना दुनिया का कोई काम नहीं चलता है किन्तु आश्चर्य है कि राधारानी की कृपा से उनकी यात्रा ब्रज की सबसे बड़ी पद यात्रा बन गयी है । कोरोना काल में अन्य ब्रजयात्रायें बन्द हो गयीं थीं, उस समय हमारे यहाँ के प्रबन्धकों ने मुझसे पूछा कि कोरोना की ऐसी विभीषिका में यात्रा कैसे निकाली जाए तो मैंने कहा कि कोरोना आदि कुछ नहीं है, श्रीराधिकारानी के सामने कोरोना क्या चीज है, इसलिए राधारानी ब्रजयात्रा इस आपदा काल में भी चलेगी, चाहे शासन इसकी अनुमति दे अथवा न दे । शासन की ओर से सौ-सवा सौ से अधिक

लोगों को यात्रा में ले जाने का आदेश नहीं था परन्तु मानिनी के मान मन्दिर की उस कोरोना कालीन ब्रजयात्रा में ६०० श्रद्धालुओं ने पूरे एक महीने तक ब्रजचौरासी कोस की परिक्रमा की, फिर भी न तो शासन की ओर से कोई प्रतिबन्ध लगाया गया और न ही अन्य किसी प्रकार की विघ्न-बाधा उपस्थित हुई, न ही कोई बीमार हुआ । इस ब्रजयात्रा का ब्रज के समस्त गाँवों में भरपूर सम्मान हुआ । यात्रियों के भोजन का प्रबन्ध भी ब्रजवासियों की ओर से किया गया, मान मन्दिर सेवा संस्थान को रसोई की व्यवस्था करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी । सन् १९८८ से प्रारम्भ हुई श्रीराधारानी ब्रजयात्रा आज भी पूर्णतया निःशुल्क है, किसी व्यक्ति से ब्रजपरिक्रमा हेतु एक भी पैसा नहीं लिया जाता । स्वेच्छा से कोई कुछ सहयोग करना चाहे तो कर सकता है, चाहे वह ब्रजवासी हो अथवा ब्रज के बाहर का हो । सामान्य परिस्थितयों में इस यात्रा में लगभग पन्द्रह हजार से अधिक व्यक्ति चालीस दिनों तक ब्रज परिक्रमा करते हैं । यह सब एकमात्र श्रीराधिकारानी की ही कृपा है, अन्यथा मैं तो एक छोटा सा आदमी हूँ, मैं न तो महन्त हूँ और न ही श्रीमहन्त हूँ । मैं तो केवल राधे-राधे कहता हूँ और कुछ नहीं करता हूँ । श्रीराधिकारानी के यश से परिपूर्ण ग्रन्थ श्रीराधासुधानिधि के अनुसार –

यज्जापः सकृद् एव गोकुलपतेराकर्षस्तत्क्षणाद्
यत्र प्रेमवतां समस्तपुरुषार्थेषु स्फुरेत् तुच्छता ।
यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः
श्रीकृष्णोऽपि तद् अद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम् ॥

(श्रीराधासुधानिधि - ९४)

जिन श्रीजी का 'राधा' नाम स्वयं श्रीकृष्ण जपते हैं । सकृद् एव गोकुलपतेराकर्षस्तत्क्षणाद् - सकृद् अर्थात् एक बार राधा नाम का उच्चारण कर लो तो गोकुलपति श्रीकृष्ण उसी समय आकर्षित हो जाते हैं और सोचते हैं – 'ओहो ! किसने राधा नाम का उच्चारण किया ?' श्रीजी का नाम लेने वाला समस्त पुरुषार्थों के प्रति तुच्छ बुद्धि रखता है । उसके लिए पुरुषार्थ चतुष्टय धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि अत्यधिक तुच्छ हैं । उसका यही भाव रहता है कि मैं राधा नाम का उच्चारण करता हूँ तो मुझे पुरुषार्थ चतुष्टय से क्या प्रयोजन है, राधा नाम के अतिरिक्त किसी अन्य साधन को करने की क्या आवश्यकता है, क्योंकि - **यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः** – जिस राधा नाम से अंकित मन्त्र अर्थात् केवल राधा नाम का जाप स्वयं माधव प्रीतिपूर्वक करते हैं, निरन्तर राधा-राधा नाम जपते हैं, इसमें ह्रीं, क्लीं आदि किसी अन्य विधान का संयोग नहीं करते, उनके पास इतना समय ही नहीं है कि राधा नाम के साथ ह्रीं, क्लीं प्रयुक्त करें । श्रीराधासुधानिधिकार कहते हैं कि वे ही दो अक्षर 'रा-धा' मेरे हृदय में स्फुरित हों ।

कालिन्दीतटकुञ्जरमन्दिरगतो योगीन्द्रवद् यत्पद
ज्योतिर्ध्यानपरः सदा जपति यां प्रेमाश्रुपूर्णो हरिः ।

श्यामसुन्दर यमुना तट पर जाकर किसी एकान्त कुञ्ज में बैठकर योगीन्द्रों की तरह एकाग्रचित्त के साथ राधा नाम जपते हैं । केवल जप ही नहीं करते अपितु श्रीराधारानी के चरणकमलों का ध्यान करते हैं । राधा नाम वे सदा ही जपते हैं । कैसे जपते हैं, नेत्रों में प्रेमाश्रु भरकर श्रीकृष्ण 'राधा' नाम का जप करते हैं । 'सदा' का आशय है कि फिर न तो वे सृष्टि निर्माण व पालन का ध्यान रखते हैं, संसार के सारे कार्यों को भूल जाते हैं, उनके पास न कोई मर्यादा है और न ही कोई बन्धन है । यहाँ तक कि अपने भक्तों की सुरक्षा सम्बन्धी विशेष कर्तव्य को भी भूल जाते हैं, भक्त- परिपालन को भी छोड़ बैठते हैं; ऐसा परम विचित्र यह 'राधा' नाम है । श्रीराधारानी के अनन्य भक्त गह्वरवनवासी श्रीकिशोरीअलीजी का राधानाम-माहात्म्य के सन्दर्भ में यह विशेष पद है – **'आधो नाम तारिहैं श्रीराधा ।'** पूरा राधा नाम कहने की आवश्यकता नहीं है, केवल 'रा' कह दो, इतने से ही करुणामयी कृपा कर देंगी । केवल 'रा' ही क्यों कहा जाऐ तो किशोरी अलीजी आगे कहते हैं – **'रा के कहे रोग सब मिटिहैं'** सबसे बड़ा और अतिशय भयावह रोग है भवरोग, भवरोग जितने भी हैं, जितनी भी इनकी शाखायें हैं, वे सब मात्र आधे अक्षर 'रा' के उच्चारण से ही भस्म हो जायेंगे । अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश आदि समस्त पञ्च क्लेश 'रा' के उच्चारण मात्र से समाप्त हो जाते हैं, इनका कोई अस्तित्त्व ही नहीं रह जाता । **'धा के कहे मिटै भवबाधा ॥'** 'धा' कहने पर तो समस्त भव-बाधाओं का समूल विनाश हो जाता है । **'जुग अक्षर की महिमा को कहै'** युग अक्षर 'राधा' की महिमा तो अवर्णनीय है । राधानाम की अचिन्त्य महिमा को न तो अनन्त कोटि ब्रह्माण्डाधीश्वर श्रीकृष्ण कह सकते हैं और अनन्त ब्रह्माण्ड

तथा उनके परे अनन्त भगवद्धामों में भी इस महिमा को कहने वाला न कोई है, न आज तक कोई पैदा हुआ, न भविष्य में भी कोई होगा । **'गावत वेद-पुराण अगाधा ।'** फिर भी जीवों के कल्याण के लिए वेद-पुराणों ने अपनी सामर्थ्य के अनुसार राधा नाम की अगाध महिमा का गायन किया है । **'अली किशोरी नाम रटत नित, लागी रहत समाधा ॥'** श्रीकिशोरीअलीजी कहते हैं कि मैं अपनी जिह्वा से सदा राधा नाम रटता रहता हूँ और ऐसा करने पर निर्विकल्प समाधि से भी श्रेष्ठ प्रेम की समाधि लग जाती है । समाधि दो प्रकार की होती है – सविकल्प एवं निर्विकल्प । सविकल्प समाधि आठ प्रकार की होती है तथा निर्विकल्प समाधि तो केवल एक ही प्रकार की होती है । 'राधा' नाम ग्रहण करने पर समाधियों के तथा अन्य समस्त प्रकार के भेद समाप्त हो जाते हैं । इसलिए केवल 'राधा' नाम रटो और कोई साधन मत करो, 'राधा' नाम से ही सहज में सम्पूर्ण प्रकार की समाधियों की परिपूर्णतम अवस्था प्रेम-समाधि की उपलब्धि हो जाती है । अतः प्रेम से गाओ –

राधा राधा राधा राधा राधा राधा ...
राधे राधे राधे राधे राधे राधे राधे...

एक बार मैंने सन्त शिरोमणि अनन्यब्रजनिष्ठ अपने बाबा श्रीप्रियाशरणजी महाराज से कहा – 'महाराजश्री ! आप मुझे मन्त्र प्रदान कीजिये क्योंकि यह परम्परा है । ' मेरी बात सुनकर पूज्यमहाराजश्री ने कहा – 'यह परम्परा हमारे यहाँ नहीं है । ' मैंने पूछा – 'ऐसा क्यों ? क्या आप वैष्णव परम्परा को नहीं मानते हैं ?' महाराजश्री ने उत्तर दिया – 'हमारी तो एक ही परम्परा है – **"परम धन राधा नाम अधार । जाहि श्याम मुरली में टेरत निशदिन बारम्बार ॥"** श्यामसुन्दर अहर्निश राधा नाम रटते रहते हैं, एक पल को भी उन्हें अवकाश नहीं है । **"जन्त्र - तन्त्र अरु वेद मन्त्र में, यही कियो निरधार ।"** श्रीबाबाप्रियाशरणजी महाराज ने आगे कहा – 'यही कारण है कि हम लोग राधा नाम के अतिरिक्त और किसी नाम अथवा मन्त्र का जप नहीं करते हैं । तुम भी राधा नाम का जप करो ।' मेरे इन सद्गुरुदेव महाराज का अखण्ड रूप से राधा नाम जप होता रहता था । मैंने इस बात को स्वयं अपने नेत्रों से देखा है कि निद्रा के समय भी उनकी जिह्वा से स्वाभाविक रूप से राधा नाम का उच्चारण होता रहता था । मैं स्वयं तो इतनी उच्चतम अवस्था तक अभी न पहुँचा हूँ किन्तु ऐसे अनन्य राधानामाराधक महापुरुष का मैंने दर्शन अवश्य किया है, उनका उच्छिष्ट प्रसाद पाया है और इतने से ही मैं सन्तुष्ट हूँ ।

भागवत में प्रतिपाद्य-शक्ति 'राधा'

ब्रजबालिका श्रीमुरलिकाजी द्वारा रसमण्डप में हुई कथा (१०/१/२०१४) से संकलित

'श्रीमद्भागवत' रसरूप ग्रन्थ है, इसमें लिखा है – **'स्वादु स्वादु पदे पदे'** – इसके प्रत्येक शब्द, अक्षर में बड़ा रस है । भागवतजी के प्रथम स्कन्ध के प्रथम श्लोक में परमात्म तत्त्व का वर्णन किया गया है –

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥

(श्रीभागवतजी १/१/१)

श्रीभागवतजी का प्रतिपाद्य विषय श्रीकृष्ण हैं लेकिन भागवतजी की रसरूपता तभी सिद्ध होगी जब इस श्लोक में 'श्रीराधारानी' की महिमा गायी जाएगी । जब तक राधा-महिमा नहीं गाई जाएगी, भागवत की रसरूपता सिद्ध नहीं होगी और 'श्रीभागवत' रसमय ग्रन्थ है, क्योंकि इसमें श्रीराधारानी को आश्रयणीया कहा गया तथा श्रीकृष्ण को आश्रित कहा गया है । भागवतजी का जो प्रतिपाद्य है, वह शक्ति है, वह श्रीराधारानी हैं एवं उस शक्ति को लेने वाले श्रीकृष्ण हैं । इसलिए कुछ रसिक महापुरुषों ने इस प्रथम श्लोक में राधारानी की लीला को भी गाया है । शंका होती है कि प्रथम श्लोक में राधालीला कैसे सिद्ध हो सकती है क्योंकि यहाँ तो ठाकुरजी का नाम लिया गया है, कृष्ण नाम यहाँ लेंगे वह तो चल भी जायेगा किन्तु राधारानी का नाम

तो इस प्रथम श्लोक में सिद्ध हो ही नहीं सकता क्योंकि इस श्लोक में कहा गया है – '**सत्यं परं धीमहि** ।' हम श्रीकृष्ण को सत्य मान सकते हैं किन्तु राधारानी के बारे में तो इस श्लोक में कुछ कहा ही नहीं गया है, इस श्लोक में राधारानी का नाम कहीं नहीं आया है । रसिक महापुरुषों ने कहा कि बिना राधारानी का वर्णन किये भागवत का रसरूप सिद्ध नहीं होगा, रस नहीं आयेगा क्योंकि आह्लादिनी शक्ति, रस शक्ति, रस प्रदान करने वाली शक्ति तो श्रीराधारानी ही हैं ।

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरत-
श्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्

इस श्लोक में 'आद्यस्य' शब्द पुल्लिंग है । संस्कृत में तीन लिंग – पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग चलते हैं; आद्यस्य शब्द पुल्लिंग का शब्द है तो यहाँ राधा नाम कैसे सिद्ध हो जायेगा, राधा नाम की सिद्धि के लिए तो यहाँ स्त्रीलिंग के शब्द का प्रयोग होना चाहिए । इसका उत्तर यह है कि कई जगह श्रीराधारानी और श्रीश्यामसुन्दर के लिए नपुंसक लिंग के जो शब्द हैं, उनका प्रयोग हुआ है जैसे तत्त्व शब्द है, तत्त्व शब्द का प्रयोग स्त्रीलिंग में भी किया जा सकता है और पुल्लिंग में भी किया जा सकता है । 'राधारानी' भी तत्त्व हो सकती हैं और 'श्रीकृष्ण' भी तत्त्व हो सकते हैं । जैसे श्रीमद्भागवत में प्रारम्भ में ही कहा गया – **वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं.....** । इसमें तत्त्व शब्द का प्रयोग हुआ ठाकुरजी के लिए । श्रीराधासुधानिधि ग्रन्थ में राधारानी के लिए कहा गया – **सुकुमारं विजयते** । 'सुकुमार' शब्द भी न तो पुल्लिंग का है और न ही स्त्रीलिंग का है, यह नपुंसक लिंग का शब्द है । इसी प्रकार श्रीराधासुधानिधि में एक जगह राधारानी के लिए कहा गया – **नवरत्नं विजयते** । 'नवरत्न' शब्द का प्रयोग भी राधारानी के लिए किया गया । इसलिए 'आद्यस्य' शब्द का प्रयोग राधारानी के लिए किया जा सकता है क्योंकि 'आद्यस्य' शब्द को हम पुल्लिंग से नपुंसक लिंग में परिवर्तित कर देंगे । वह कैसे होगा ? एक नियम है नपुंसक लिंग का कि प्रथम दो वचन प्रथमा विभक्ति और द्वितीया विभक्ति तो एक से चलते हैं किन्तु तृतीया विभक्ति से नपुंसक लिंग के जितने भी शब्द हैं, वे पुल्लिंग की तरह ही चलते हैं । जैसे 'फल' शब्द नपुंसक लिंग है, तृतीया विभक्ति से 'फल' शब्द के वचन भी पुल्लिंग की तरह ही चलेंगे जैसे तृतीया विभक्ति में फलेन, फलाभ्याम्, फलैः । वैसे ही राम शब्द पुल्लिंग है तो रामेण, रामाभ्याम्, रामैः। अब यहाँ 'आद्यस्य' शब्द नपुंसकलिंग की षष्ठी विभक्ति है, अतः 'आद्यस्य' शब्द राधारानी के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है तथा श्रीकृष्ण के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है । 'आद्यस्य' – जो श्रीराधारानी भगवान् की भी आराध्या हैं । स्कन्दपुराण में कहा गया – **"आत्मा तु राधिका तस्य तयैव रमणादसौ ।"** श्यामसुन्दर की भी आत्मा हैं श्रीराधारानी, इसलिए उन राधारानी से अनादि-आदि-सर्वकारण कोई हो नहीं सकता है । राधारानी का जन्म कहाँ हुआ ? उनके जन्म के अवसर पर दो बातें मिलती हैं – 'रावल' में भी उनका जन्म माना जाता है और 'बरसाना' में भी उनका जन्म माना जाता है । राधारानी ने जन्म लिया रावल में और फिर जन्म लेकर कहाँ आयीं ? बरसाने में आ गयीं । क्योंकि रसिक महापुरुषों ने जो पद गाये हैं, उसमें जितनी लीलायें बरसाने की मिलती हैं, उतनी रावल की नहीं मिलती हैं । रावल में राधारानी का जन्म तो गाया गया है किन्तु जितनी भी लीलायें हुई हैं, वे सब बरसाना धाम में ही हुई हैं । श्रीजी ने जन्म लिया रावल में और वहाँ से आयीं बरसाने में, क्यों आयीं ? ठाकुरजी को ब्रज में ब्रज लीला करनी थी और ब्रज के बाहर भी काम करना था परन्तु राधारानी क्यों आयीं, उनको क्या काम था बरसाने में ? इनका प्रमुख कार्य था महारासलीला करना । बिना श्रीजी के आश्रय के श्यामसुन्दर रासलीला नहीं कर सकते थे । इसलिए महारास करने के लिए राधारानी रावल से बरसाना आयीं । अब कृष्णलीला में तो ब्रह्माजी मोहित हुए फिर राधारानी की लीला में कौन मोहित हुआ ? श्रीजी की महारास लीला सुनकर श्रवण भक्ति के आचार्य श्रीपरीक्षितजीमहाराज मोहित हो गये । **'मुह्यन्ति यत्सूरयः'** मोहित होकर परीक्षितजी ने शुकदेवजी से प्रश्न कर दिया कि श्रीकृष्ण ने तो धर्म का व्यतिक्रम किया, धर्म का उल्लंघन किया, परस्त्रियों का स्पर्श किया । अतः राधारानी और श्यामसुन्दर की महारास लीला, उनकी जितनी भी आन्तरिक श्रृंगाररस की लीलायें हैं, इन लीलाओं को सुनकर परीक्षितजी जैसे भी मोहित हो गये, जो श्रवणभक्ति के आचार्य हैं, फिर औरों के बारे में तो क्या कहना – **"तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो**

यत्र त्रिसर्गोऽमृषा"

श्यामसुन्दर की वंशी-ध्वनि के प्रभाव से जैसे पाषाण पिघल गये, यमुनाजी रुक गयीं, इस प्रकार का श्रीजी में कौन-सा प्रभाव है तो गोपियाँ श्यामसुन्दर से कहती हैं कि तुम सैकड़ों वंशी-ध्वनि भी एक साथ करो तो वह राधारानी के एक भी नूपुर की ध्वनि की बराबरी नहीं कर सकती है । अतः जब श्रीजी की नूपुर ध्वनि होती है तो उस समय भी प्रकृति में, सृष्टि में विरोधाभास होने लग जाता है । तरल जड़ हो जाता है, जड़ तरल हो जाता है । गोपियाँ नृत्य करना भूल जाती हैं, श्यामसुन्दर वंशी बजाना भूल जाते हैं । **"तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो"** ये श्रीजी के नूपुर का चमत्कार है और **"यत्र त्रिसर्गोऽमृषा"** – जैसे श्रीकृष्ण की त्रैसर्गिक लीला है – मथुरा लीला, ब्रज लीला एवं द्वारका लीला, उसी प्रकार राधारानी की भी तीन जगह लीलायें हुई हैं – बरसाना, रावल एवं वृन्दावन; ये श्रीजी के त्रैसर्गिक लीलास्थल हैं । श्रीजी ने रावल में जो लीला की, बरसाने में जो लीला की और वृन्दावन में जो लीला की, ये तीनों ही लीलायें अमृषा हैं, नित्य हैं, सत्य हैं । स्कन्दपुराण के अनुसार लीला के दो भेद किये गये हैं - एक होती है वास्तवी लीला और दूसरी होती है व्यावहारिकी लीला । इसी का दूसरा नाम है नित्य लीला और प्रकट लीला । वास्तवी लीला को नित्य लीला कहा गया और व्यावहारिकी लीला को प्रकट लीला कहा गया है । नित्य लीला वह है जो नित्य धाम में सदा-सर्वदा चलती रहती है, वहाँ ठाकुरजी का जन्म और लीला संवरण नहीं होता तथा प्रकट लीला वह है जैसे द्वापर में भगवान् 'कृष्ण' रूप से आये, उन्होंने जन्म लिया फिर बाललीलायें कीं, कभी रोये, कभी हँसे, कभी ब्रजवासियों के साथ खेले । इसके बाद मथुरा में जाकर लीला की, फिर द्वारका में लीला की और अन्त में धाम-गमन कर गये । अतः इस मृत्युलोक में जो लीला होती है, उसमें ठाकुरजी का जन्म भी होता है, लीला संवरण भी होता है किन्तु नित्य धाम में जो नित्य लीला चल रही है, उसमें जन्म और लीला-संवरण का व्यवधान नहीं होता है, वहाँ तो सदा से लीला चल रही है और सदा ही चलती रहेगी परन्तु ब्रजभूमि का उत्कर्ष बताते हुए कहा गया कि यह जो बरसाना धाम है, यह जो गह्वर वन धाम है – **'अत्रैव ब्रजभूमिः सा'** – यह ब्रजभूमि वह धाम है जहाँ नित्य लीला एवं प्रकट लीला, दोनों ही लीलायें चलती हैं । प्रकट लीला चलती है, यह बात तो देखने में आ जाती है जैसे द्वापर युग में श्रीजी ने अवतार लिया और लीला की परन्तु अब तो वे हमें दिखायी ही नहीं पड़ रहीं हैं । नित्य लीला का तो मतलब है कि हमेशा लीला चलती रहे परन्तु हमें तो श्रीजी यहाँ दिखायी ही नहीं दे रही हैं, फिर हम कैसे मान लें कि इस ब्रजभूमि में नित्य लीला चल रही है । स्कन्दपुराण में इसका उत्तर दिया गया है कि यहाँ नित्य लीला तो सदा चल ही रही है किन्तु जो इसके अधिकारी भक्तजन हैं, उन्हीं को इसका दर्शन होता है । अब हमें इसका दर्शन नहीं हो रहा है तो इसका मतलब यह नहीं है कि यहाँ लीला हो ही नहीं रही है । लीला तो हो रही है किन्तु हमें इसका दर्शन नहीं हो रहा है, यह बात अलग है लेकिन यहाँ प्रकट लीला भी होती है एवं नित्य लीला भी होती है । दोनों ही लीलायें श्रीराधारानी के इस पावन बरसाना धाम, ब्रजभूमि में होती हैं । श्रीकृष्ण की जो त्रैसर्गिक लीला कही गयी है – 'ब्रजलीला, मथुरालीला और द्वारकालीला' उसमें जो ब्रजलीला है, उसको नित्यलीला माना गया है तथा मथुरा, द्वारका की जो लीला है, उसको प्रकटलीला माना गया है । मथुरा और द्वारका में तो श्रीकृष्ण कभी आयेंगे और कभी चले जायेंगे परन्तु 'ब्रज' से तो न कभी वे गये और न ऐसा है कि किसी निश्चित समय पर वे यहाँ आयेंगे, यहाँ तो वे सदा से हैं और सदा ही रहेंगे । इसीलिए ब्रजलीला को नित्यलीला माना गया है और मथुरा-द्वारका की लीला को प्रकटलीला माना गया है । वैसे ही श्रीजी की जो त्रैसर्गिक लीला है रावल, बरसाना और वृन्दावन में; तो बरसाने की लीला को यहाँ के रसिकों ने नित्यलीला माना है एवं रावल तथा वृन्दावन की लीला को प्रकटलीला माना है । प्रकटलीला में आना-जाना होता है किन्तु नित्यलीला में आना-जाना नहीं होता है । अतः बरसाने में तो श्रीराधारानी नित्यविहार करतीं हैं परन्तु यह नित्यलीला उसी को दिखायी पड़ती है जैसा कि रसिकों ने गाया है –

यह रस बरसे बरसाने जू ।
बिनु कुँवरि कृपा को पावे जू ॥

जिस पर कृपा वर्षा, अनुग्रह वर्षा हो जाये, उसका साक्षात् नित्य लीला में प्रवेश हो जाता है । यह नित्य लीला भूमि है, यहाँ नित्य ही राधारानी की लीला होती रहती है और

अधिकारीगणों को उसका दर्शन भी प्राप्त हो जाता है । जिन पर श्रीजी की कृपा होती है, उन्हीं को यहाँ नित्य लीला का दर्शन होता है । महापुरुषों ने कहा है –

गह्वर श्रीराधा को घर है ।
ताकी देहु सोहिनी स्वामिनी,
यही चाह मो उर अंतर है ॥

'गह्वरवन' राधारानी का नित्य घर है, उनका अपना घर है; अब वे जिसे चाहें अपने घर में बुलायें, जिसे चाहें उसे अपनी अनुभूति करायें । बिना उनकी इच्छा के, बिना उनकी कृपाशक्ति के अनुभव में राधारानी नहीं आयेंगी । बरसाना नित्य लीला स्थल है, इसका क्या प्रमाण है ? इसका प्रमाण भी परम रसिक संत श्रीव्यास जी महाराज की वाणी में दिया गया है, उन्होंने अपने एक पद में कहा –

लागी रट राधा-राधा नाम ।
ढूँढ फिरी वृन्दावन सगरो नन्द डिठौना श्याम ॥
कै मोहन कै खोर साँकरी कै मोहन नंदगाँव । व्यासदास
की जीवन राधे धनि बरसानो गाँव ॥

स्वयं रसिकों की वाणी से ही यह प्रमाणित है कि बरसाना नित्य लीला भूमि है, नित्य लीला स्थल है । आज भी यहाँ नित्यलीला हो रही है । अधिकारीजनों को, पात्रों को इसका अनुभव भी होता है, उनको दर्शन भी होता है । राधारानी सदा ही बरसाने में विराजती हैं और भक्तों की अभिलाषा को पूर्ण करती हैं, ऐसी वे करुणामयी हैं । श्रीमद्भागवत रसरूप ग्रन्थ है, इसीलिए शुकदेवजी ने इसके रस का प्रकाशन किया; रस का प्रकाशन कब होगा ? जब युगल तत्त्व का इसमें वर्णन होगा । केवल कृष्णलीला का वर्णन कर दिया, इससे भागवत की रसमयता की सिद्धि नहीं होगी । इसीलिए भागवत में राधारानी की लीला का भी वर्णन हुआ है । अब प्रश्न यह है कि शुकदेवजी ने गोपनीय रूप से राधारानी की लीला का वर्णन क्यों किया, उन्हें स्पष्ट रूप से राधारानी का नाम लेना चाहिए था, इसके समाधान में व्यासजी महाराज का एक पद है –

परम धन राधा नाम आधार ।
जाहि श्याम मुरली में गावत, सुमिरत बारम्बार ।
श्रीशुक प्रकट कियो नहिं याते, जानि सार को सार ॥

राधा नाम सारमयी वस्तु है, यह सबका निष्कर्ष है, सब सिद्धान्तों का सार है ।

युगल नाम श्रुति सार है राधे कृष्ण राधे कृष्ण ।

समस्त वेद, उपनिषद्, श्रुतियों का सार है राधा नाम । यदि ऐसा तो है तो फिर स्पष्ट रूप से राधा नाम का उल्लेख भागवत में क्यों नहीं किया गया ? इसका उत्तर यह है कि जो वस्तु अधिक मूल्यवान होती है, उसको मनुष्य सड़क पर नहीं फेंकता है । उस वस्तु को छिपाकर ही रखा जाता है । मान लो हमारे पास कोई बहुत महामूल्यवान हीरा हो, मणि हो तो ऐसा नहीं है कि उसे हम साधारण रूप से घर में पटक देंगे । उस मणि के लिए सोने की सुन्दर सी पिटारी बनायी जाएगी । उस पिटारी को लोहे की पिटारी में रखा जायेगा फिर उस पिटारी को अलमारी में रखा जायेगा और कमरा बंद कर दिया जायेगा । इतना सँभालकर हम लोग उस मणि को रखेंगे । एक लौकिक जगत की सामान्य सी वस्तु को जब हम लोग इतना सँभालकर रखते हैं तो फिर जो राधा नाम समस्त सिद्धान्तों का सार है, निष्कर्ष है, उसको शुकदेव जी महाराज इतना स्पष्ट नहीं कह सकते हैं । इसलिए राधा नाम को भागवत में छिपाकर रख दिया कि जिन पर श्रीजी की कृपा है उनको यह मिल जायेगा और नहीं कृपा है तो नहीं मिलेगा । अब हमें न मिले तो इसका मतलब यह नहीं है कि राधा नाम का उल्लेख शुकदेव जी ने भागवत में कहीं किया ही नहीं । हम न समझें तो यह हमारी बुद्धि का दोष है । वैसे भी सनातन संस्कृति में एक आर्य मर्यादा है – **आत्मनाम गुरोर्नाम नामाति कृपणस्य च ।**
न नामो गृह्णीयात् ज्येष्ठा पत्य कलत्रयो ॥

हमारे भारतवर्ष में पहले ऐसी मर्यादा थी कि लोग अपनी पत्नी का नाम नहीं लेते थे और यहाँ तक कि अपने बड़े पुत्र का नाम भी नहीं लेते थे । ऐसा क्यों तो इसका उत्तर है उनके सम्मान के लिए । इसी प्रकार शुकदेव जी ने राधा नाम का भागवत में स्पष्ट उल्लेख नहीं किया, क्यों, उनके सम्मान के लिए । जिन शुकदेवजीमहाराज की ऐसी स्थिति है – **राधा श्रवण मात्रेण मूर्च्छा षाण्की भवेत् ।**
अतः नोच्चारितं स्पष्टं परीक्षित हितकृन् मुनिः ॥

श्रवण-पथ में कभी राधा नाम चला जाता, कभी सुनने में ही आ जाता तो शुकदेवजी महाराज को छः महीने की समाधि लग जाती थी । अब जब वे परीक्षित जी को भागवत कथा श्रवण कराने के लिए बैठे हैं, राधा नाम उच्चारण करने से ही यदि छः महीने की समाधि लग जाएगी

तो फिर आगे की कथा चर्चा कौन करेगा, परीक्षितजी को कौन कथा सुनाएगा ? अतः परीक्षितजी का हित करने के लिए, उनके कल्याण के लिए स्पष्ट राधा नाम का उल्लेख भागवत में नहीं किया गया । परन्तु दशम स्कन्ध की रासपंचाध्यायी में शुकदेवजी ने स्थान-स्थान पर श्रीराधारानी के लिए कहीं 'वधू' शब्द का प्रयोग किया, कहीं 'राधसा' शब्द का प्रयोग किया, कहीं अनयाऽऽराधितो नूनं कहकर आराधित शब्द का प्रयोग किया, इस तरह उन्होंने जगह-जगह राधारानी की लीला का गान किया है । स्पष्ट राधा नाम का उल्लेख नहीं किया; वैष्णव आचार्यों ने बताया है कि एकादश स्कन्ध में भगवान् श्रीकृष्ण ने उद्धवजी से कहा है – **परोक्षवादा ऋषयः परोक्षं मम च प्रियम् ।**

(श्रीभागवतजी ११/२१/३५)

जो बात परोक्ष में कही जाती है, वह मुझे प्रिय है । अतः यह स्वयं भगवान् की इच्छा है कि गुप्त रहस्य को परोक्ष में ही कहना चाहिए । काव्य शास्त्र की दृष्टि से भागवत में ऐसी परम्परा नहीं है । भागवत में किसी भी गोपी का नाम नहीं दिया गया है । जब किसी भी गोपी का नाम नहीं है तो फिर श्रीजी का नाम भी नहीं है । इन्हीं कारणों से भागवत में श्रीजी का नाम नहीं दिया गया है । परन्तु भागवत १०/३०/२६ में स्पष्ट रूप से लिखा है – **वध्वाः** । श्रीकृष्ण की नित्य वधू राधारानी ही हैं । इसीलिए कुछ लोग स्वकीया भाव से श्रीजी की उपासना करते हैं ।

श्रीकरुणा-स्वरूपिणी 'भागवतजी'

श्रीजी में ऐसी करुणा है, ऐसी दया है, ऐसा वात्सल्य है कि उसका कोई पारावार नहीं है । 'श्रीराधासुधानिधि' ग्रन्थ में तो लिखा है कि श्रीजी के नेत्र सदा करुणाश्रुओं से सजल रहते हैं (हमेशा श्रीजी की आँखें करुणा के जल से भरी रहती हैं), क्यों ? क्योंकि श्रीजी चिन्तन करती हैं कि ये बेचारे जीव संसार में भटक रहे हैं, दुःखी हैं, नाना प्रकार के ताप से ग्रस्त हैं, ये किसी भी प्रकार से मेरे सन्मुख हो जाएँ, मेरे शरणागत हो जाएँ तो मैं दौड़कर इन्हें अपने गोद में उठा लूँ, इनका प्रगाढ़ आलिंगन कर लूँ; ऐसी करुणामयी हैं राधारानी ।

एकबार श्रीजी उदास भाव से बैठी हुई थीं । उसी समय श्रीशुकदेवजी वहाँ गये और विनयपूर्ण वाणी बोले – "हे राधे ! हे स्वामिनी जू !! आप ऐसे उदास क्यों बैठी हुई हैं ?" श्रीजी ने कहा – "मेरे औदास्य का एक ही कारण है कि संसार के जो बेचारे दुःखी प्राणी हैं, ये मेरे सन्मुख क्यों नहीं हो जाते, एक बार भी मेरे सम्मुख हो जाएँ, मुझे याद (स्मरण) कर लें, मेरा चिन्तन कर लें, तो इनको कभी किसी दुःख को भोगना नहीं पड़ेगा, कभी दुःख इनके समीप भी नहीं आ पायेगा ।" तो शुकदेवजीमहाराज ने कहा – "हे स्वामिनी जू ! क्या इसका कोई उपाय है, जो संसार के त्रिताप से संतप्त प्राणी अपनी पीड़ा से मुक्त हो जाएँ ?" श्रीजी ने कहा कि हाँ, एक उपाय है कि कोई संसार में जाकर युगल सरकार (हम दोनों राधा-माधव) के कथा-गंगा को प्रवाहित कर दे और उस दिव्य कथारस में जो भी अवगाहन कर लेगा, उसमें जो भी अभिसिक्त 'अभिसिंचित, स्नात' हो जाएगा, वह सदा-सदा के लिए मुझे प्राप्त हो जाएगा, लेकिन उस कथारस-गंगा को कौन प्रवाहित करे ?

तो शुकदेवजी ने यह दायित्व स्वयं ले लिया और कहा कि हे स्वामिनीजू ! आप किसी भी प्रकार से शोकातुर न हों, आप चिन्ता न करें, मैं इसी समय जाऊँगा भू-लोक में और वहाँ जाकर आप दोनों युगलसरकार राधामाधव दिव्यदम्पत्ति के दिव्य कथा-सरिता की सरस मंदाकिनी का प्रवाह करूँगा और निश्चित ही समस्त प्राणी उसमें अवगाहन करेंगे, इसमें ऐसा आनन्द होगा कि जो एकबार उस रस का आस्वादन कर लेगा, "**यदनुचरितलीलाकर्णपीयूषविप्रुट् सकृददनविधूतद्वन्द्वधर्मा विनष्टाः** । (श्रीभागवतजी १०/४७/१८) एक कणिका भी जो चख लेगा, वह इससे बिल्कुल बाहर नहीं आना चाहेगा; एकबार कोई इसमें प्रवेश कर ले तो यह कथा-मंदाकिनी ऐसी है कि कभी बाहर निकलने नहीं देगी, इच्छा ही नहीं होगी कि इससे बाहर आयें ।

लेकिन देखो, जो इस कथा से तृप्त हो गये; प्रायः लोग ऐसा भी कह देते हैं कि क्या सुनें, वही कथा है, हम तो सुन-सुन कर अघा गए (ऊब गए) । भगवद्कथा से जो तृप्त हो गया, समझ लो उसने भगवद्कथा को न सुना, न समझा ।

राम चरित जे सुनत अघाहीं ।
रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं ॥

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड - ५३)

जो भगवान् के लीलारस-चरित्रों से अघा गये, जो तृप्त हो गये, समझ लो वे उस रस को प्राप्त नहीं कर पाये, उस रस को समझ नहीं पाये; इस कथा को सुनने के उपरान्त सदैव एक ही इच्छा हो कि अब यह कथा और कब सुनने को मिले ? तो ही उस दिव्य रस की प्राप्ति हो सकती है, अन्यथा असम्भव है ।

तो श्रीशुकदेवजीमहाराज ने श्रीजी की कृपा-करुणा, आज्ञा-निर्देशन से इस धरा-धाम पर आकर भागवत-कथा का गान किया है । बहुत दिव्य कथाएँ प्राप्त होती हैं 'श्रीशुकदेवजी' के अवतार के विषय में । हमारे पूज्य श्रीबाबामहाराज बताते हैं कि 'आनन्दवृन्दावनचम्पू' एक बहुत सुन्दर ग्रन्थ है गौड़ेश्वर सम्प्रदाय के आचार्यों का, उसमें शुकदेव प्रभु के अवतारकाल की बहुत दिव्य चर्चा की है, उसमें वर्णन मिलता है कि शुकदेवजी राधारानी के पालित शुक (तोता) हैं – **गाढानुरागभरनिर्भरभङ्गुरायाः**

कृष्णेति नाम मधुरं मृदु पाठयन्त्याः ।
धिङ्मामधन्यमतिचञ्चलजातिदोषाद्
देव्याः कराम्बुरुहकोरकतश्च्युतोऽस्मि ॥

एकबार श्रीराधारानी 'गाढानुराग' बहुत प्रेम में भरी हुईं थीं और अपने लालित-पालित तोता (शुकदेव जी) को अपने हाथ में बैठाकर कहतीं – '**कृष्णेति नाम मधुरं मृदुपाठयन्तः**' 'अरे शुक ! कृष्ण बोल - कृष्ण बोल' तो वह तोता भी कृष्ण-कृष्ण रटता था और जब वह शुक कृष्णनामोच्चारण करता तो श्रीराधारानी एकदम प्रेम में अभिभूत (सराबोर) हो जाया करतीं थीं, तो वह तोता सोचता कि जब 'कृष्ण-नाम' में ही इतनी मिठास (मधुरता) है तो उन कृष्ण में कैसी मधुरता होगी ? उनका दर्शन करना चाहिए, ऐसा विचार मन में आया । तो वह तोता श्रीजी के हाथ से उड़ गया और नंदगाँव में जाकर एक वृक्ष पर बैठकर 'कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण...' रटने लगा, अब जैसे ही 'कृष्ण' नाम रटा तो ठाकुरजी आये, ठाकुरजी का दर्शन किया उस शुक ने लेकिन सोचने लगा कि जो मधुरता (मिठास) श्रीजी के करकमल में बैठने पर मुझे अनुभव हो रही थी, जब श्रीजी मुझे 'कृष्ण नाम' पढ़ाया करतीं थीं, उसमें जो मधुरता थी, वह तो 'कृष्ण' में भी नहीं है ।

अनन्य नृपति स्वामी श्रीहरिदासजी महाराज ने एक पद में कहा है –

"बड़े भए हौ बिहारी याहि छाँहिं ते । "

जब से श्रीजी ने आपको बरसाने में निवास दिया, जब से श्रीजी ने आपसे सम्बन्ध स्वीकार किया, तब से ही आपमें रसमय गुण आये हैं, नहीं तो आपमें कोई सरस गुण नहीं हैं ।

तो श्रीजी (श्रीराधारानी) के कारण उस शुक को जो मधुरता प्राप्त हो रही थी, वह उसे ठाकुरजी के पास भी नहीं मिली तो वह शुक अपने-आपको धिक्कारने लगा – '**धिङ्मामधन्य**' मुझे धिक्कार है, मैं अधन्य हूँ । '**मतिचञ्चलजातिदोषाद्**' मेरी जाति ही बुरी है, (क्योंकि पक्षी जाति में चंचलता बहुत होती है, पक्षी कभी यहाँ एक डाल पर बैठा तो दूसरे क्षण दूसरे डाल पर चला जाएगा, पक्षी के अन्दर चापल्य का होना सहज (स्वाभाविक) है ।) '**देव्याः कराम्बुरुहकोरकतश्च्युतोऽस्मि**' अरे ! मुझे धिक्कार है, मैं श्रीजी के कर-सम्पुट (कर-कोरक) से उड़ कर आ गया, लेकिन मुझे यहाँ वह रस-प्राप्ति नहीं हो रही है, जो रस मुझे श्रीराधारानी के पास मिल रहा था ।

तो शुकदेवजी राधारानी के पालित शुक (तोता) हैं, ऐसा भी ग्रन्थों में प्राप्त होता है । इसके अतिरिक्त एक ग्रन्थ है – **रुद्रयामल**, इस ग्रन्थ में बहुत दिव्य बात लिखी है, इसमें ये दर्शाया गया है कि शुकदेवजी साक्षात् श्रीठाकुरजी हैं; इसमें कहा है –

क्रीडा शुको श्रीवृषभानुजाया पवित्र चञ्चु प्रिय चुम्बनेन ।
एकान्त कोऽनन्य रहस्य पाठी, निकुञ्ज प्रासाद सदा निवासी ॥

देखो, नित्य गोलोक जहाँ दिव्य दम्पत्ति श्रीराधामाधव युगल सरकार विराजमान रहते हैं, जहाँ श्रीजी-ठाकुरजी की एकान्तिक निभृत निकुँज की लीलाएँ सम्पन्न होती हैं । वहाँ एकबार श्रीजी-ठाकुरजी दोनों लीला विहार कर रहे थे, उस लीला-विहार में केवल सहचरियों का प्रवेश है और किसी का भी प्रवेश नहीं है । तो ठाकुरजी के मन में इच्छा हुई कि हम युगल सरकार में जो रस है, जिसका आस्वादन ये समस्त सखी-सहचरियाँ कर रही हैं, तो एक बार मैं भी तो यह रस आस्वादन करके देखूँ । अब देखो, ठाकुरजी के मन में ही अपने और श्रीजी के सम्मिश्रित लीलारस के

आस्वादन करने की इच्छा हुई । तो ठाकुरजी ने उसी समय शुक रूप ग्रहण कर लिया, अब शुक रूप बनकर ठाकुरजी उसी निभृत-निकुँज में चले गये, जहाँ केवल राधारानी बैठी हुई थीं । वहाँ 'श्रीजी' ठाकुरजी की प्रतीक्षा कर रहीं थीं कि अब ठाकुरजी आयेंगे तो लीला सम्पन्न होगी, बहुत देर हो गई, राधारानी के नेत्रों से प्रतीक्षा के कारण झर-झर अश्रु बह रहे थे – अभी श्रीकृष्ण नहीं आये, अभी श्रीकृष्ण नहीं आये । तो उसी समय 'ठाकुरजी' शुक रूप से वहाँ चले गये और वहाँ जाकर 'कृष्ण-श्रीकृष्ण-कृष्ण-श्रीकृष्ण' ठाकुरजी का नामोच्चारण करने लगे श्रीराधारानी के सम्मुख बैठकर । अब जैसे ही 'कृष्ण नाम' सुना तो एकदम श्रीजी ने दृष्टिपात किया कि अरे ! ये शुक कितना मधुर नाम ले रहा है !! कैसी मिठास है इसकी वाणी में !!! तो श्रीजी गईं उस शुक के पास और सबसे पहले शुक को श्रीजी ने अपनी दाहिनी हथेली पर बिठाया और उस हथेली पर बैठकर वह शुक 'कृष्ण-कृष्ण' रटने लगा । शुकदेवजी बैठे हैं राधारानी के कर-कोरव (कर-सम्पुट) पर, तो यह व्यासासन हो गया । अब वहाँ बैठकर शुकदेव महाप्रभु 'कृष्ण-कृष्ण' उच्चारण करने लगे, अब जैसे ही 'कृष्ण नाम' लें तो श्रीजी क्या करतीं ? "**पवित्र चञ्चु प्रिय चुम्बनेन**" इतना मधुर नाम शुक लेता ! इतना मधुरमय नाम !! कि श्रीजी से रहा नहीं जाता, अपनी बायीं हथेली को अपने मुख से चूमतीं और फिर ले जाकर उस कर को उस शुक के मुख पर लगा देतीं और बार-बार उस शुक की चञ्चु (चोंच) को चूम लेतीं ।

तो सोचो शुकदेव महाप्रभु के जिस चञ्चु से इस श्रीमद्भागवत का प्राकट्य हुआ, उस चञ्चु का चुम्बन स्वयं श्रीराधारानी ने किया तो शुकदेवजी के अन्दर उसी समय राधारानी ने अपना सर्वस्व अधरामृत प्रदान कर दिया । अब सोचो, उन शुकदेव महाप्रभु के मुख से निःसृत इस श्रीमद्भागवत महामहिम ग्रन्थ की क्या महिमा होगी !! अनिर्वचनीय है !!! श्रीपरीक्षितजी ने शुकदेवजीमहाराज से ही कथा का श्रवण किया क्योंकि जब शुकदेवजी कथा सुनायेंगे तो आगे भविष्य में इस कथा का बड़ा सुन्दर प्रचलन होगा, बहुत लोग कथा कहेंगे, बहुत-से लोग इसका श्रवण करेंगे । लेकिन देखो – कथा के कथन-श्रवण के पूर्व एक बहुत महत्त्वपूर्ण शर्त रख दी गई कि वक्ता और श्रोता को कृष्णार्थी होकर के कथा कहनी और सुननी चाहिए, धनार्थी होकर नहीं । यदि हमारे मन में रञ्चमात्र (अति सूक्ष्म) भी धन अथवा संसार की अन्य कोई भी वैषैयिक वस्तुओं की इच्छा है तो हमें कथा सुनने का जो यथार्थ लाभ है, वह कभी नहीं मिलेगा । वक्ता यदि धनार्थी है, वक्ता ये माने कि कथा तो एक व्यापार (सौदा) है, खूब चढ़ावा (द्रव्य, दान-दक्षिणा आदि) आ रहा है, उसको समेट लें, बस यही कथा का फल मिल गया । अरे ! नहीं, यदि यह लक्ष्य लेकर कथा की तो तुम्हें कथा-कथन का भी सम्यक् लाभ नहीं मिलेगा । इसलिए वक्ता भी कृष्णार्थी हो और श्रोता भी कृष्णार्थी हो, तब जाकर कथा के कथन-श्रवण का दोनों को यथार्थ भक्तिमय लाभ होगा, अन्यथा यदि धन आदि में लुढ़क गये तो फिर भले ही बार-बार कथा सुनो तो भी लाभ नहीं मिलेगा । अतः जब श्रीठाकुरजी की प्राप्ति का सुदृढ़ लक्ष्य लेकर कथा सुनी जाएगी कि इस जन्म में, इसी जीवन में, इसी शरीर से और इसी कथा के माध्यम से हम श्रीठाकुरजी को प्राप्त कर लेंगे, तो ही उसका सम्यक् लाभ होगा, जिससे सहज ही 'विशुद्ध प्रेममयी भक्ति' की प्राप्ति हो जाएगी ।

धामवास कैसे करें ?

जीवन में श्रीइष्ट के नाम का आश्रय और श्रीधाम का आश्रय बहुत आवश्यक है । बिना नाम के धाम में परिपक्वता नहीं आएगी । हम धामवास कर रहे हैं, धाम में रह रहे हैं, लेकिन जीवन सारा भक्ति-शून्य (बहिर्मुखता में) जा रहा है, श्रीठाकुरजी के नाम रूप, गुण, लीला से विहीन है, व्यर्थ बातें करने में जा रहा है, इधर-उधर के व्यवहारों में जा रहा है तो वह धामवास भी सार्थक नहीं होगा । हमारे श्रीराधावल्लभ सम्प्रदाय के आचार्य श्रीध्रुवदासजी महाराज ने कहा है – **वृन्दावन में बसत ही, एतो बड़ो सुजान ।**
युगलचन्द्र के भजन बिनु, निमिष न दीजै जान ॥
(श्रीबयालीसलीला) धामवास तभी सफल होगा जब उसमें श्रीयुगलसरकार के नाम का परिपूर्ण आश्रय लेकर रहा जाएगा, एक निमेष भी ऐसे न जाए भगवद्-धाम में जो बिना भगवच्चर्चा-कथन-श्रवण के रहित हो । हम जैसे लोग धाम में तो जाते हैं लेकिन वहाँ जाकर मौज-मस्ती में खाये-पिये और चले आये, इस तरह धाम में नहीं आना-जाना चाहिए । धामवास तभी सफल होगा जब धाम में रहकर निरन्तर युगल रसराज 'श्रीराधामाधव' के नाम-रूप-लीला-गुणों के कथन और श्रवण में ही जीवन जाए ।

परम कृपामय 'श्रीराधावतार'

बाबाश्री द्वारा कथित श्रीराधासुधानिधि (१० अगस्त, २०२०) से संकलित

श्रीराधासुधानिधि में कहा गया है कि अपने धाम से श्रीजी आयीं – **पूर्णानुरागरसमूर्ति तडिल्लताभम्**

ज्योतिः परं भगवतो रतिमद्रहस्यम्
यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे
स्यात्किङ्करी भवितुमेव ममाभिलाषः ॥

(श्रीराधासुधानिधि – ४०)

जो पूर्णानुराग रस की मूर्ति हैं, अनेक विद्युत-लताओं के समान जिनकी कान्ति है; वह ज्योति भगवान् से आगे की है, रतिमद्रहस्य है; उसका प्रादुर्भाव बरसाने में वृषभानुजी के घर में होता है, उसकी किंकरी हम लोग बनें, यह अभिलाषा है । यह है राधासुधानिधि में राधारानी का अवतार । अवतार से पहले भी वे नित्य धाम में विराजती हैं, जहाँ उनकी नित्य लीला चलती है । इसलिए पहले श्लोक में ही, अवतार लेने के पहले जहाँ जिस दिशा में, अव्यक्त धाम में श्रीजी विराजती हैं, उसको नमस्कार किया गया है । दूसरे श्लोक के अनुसार ब्रह्मादि को भी उनके चरण दुर्लभ हैं । अद्भुत वैभव है जिनके चरणों के पराग का, कृपा के कारण जिनकी रस वर्षा होती है, उनकी महिमा को प्रणाम किया गया है । इसके बाद तीसरे श्लोक में जब श्रीजी अवतार लेती हैं तो ग्रन्थकार कहते हैं कि ब्रह्मा, शिव, शुक, प्रणाम किया गया है । छठवें श्लोक में जब श्रीजी का अवतार हुआ था या होता है तो इसीलिए होता है कि अस्मदादि जो जीव हैं, उन पर कृपा करने के लिए होता है । भगवान् अपने धाम से आते हैं या श्रीजी आती हैं तो क्यों आते हैं तो चालीसवें श्लोक में कहा गया – 'यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे' – कृपा से राधारानी आती हैं, कहाँ आती हैं, वृषभानुजी के गेह (मन्दिर) या भवन में । इसलिए अवतार काल के बाद की जितनी भी श्रीजी की लीला गायी गयी है, उसके पहले का जितना भी श्रृंगार रस है, वह नित्य धाम का है । यह श्रृंगार-रस अनादि है, ऐसा नहीं है कि पहले नहीं था । अवतार – अव माने नीचे, तार माने उतरना । भगवान् नीचे उतरते हैं, कहाँ से उतरते हैं, नित्य धाम से उतरते हैं, इसलिए राधारानी जब अवतार लेती हैं तो चालीसवें श्लोक में स्पष्ट कहा गया है – यत्प्रादुरस्ति – नारद आदि जो द्वादश प्रमुख भागवत हैं, उनको भी श्रीजी के चरणकमल दुर्लभ हैं, उनकी चरणरज दुर्लभ है, हम उसका स्मरण करते हैं किन्तु अभी वे अपने आपको श्रीजी के स्मरण का अधिकारी नहीं मानते हैं । चौथे श्लोक में ग्रन्थकार कहते हैं – 'चरणरेणुमहं स्मरामि' – 'अहं' शब्द से तात्पर्य है कि हम सभी लोग श्रीजी की चरणरज का स्मरण करते हैं, उनकी चरणरज को प्रणाम करने के योग्य हैं क्योंकि श्रीजी अवतार लेती हैं । 'यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे' अवतार इसीलिए होता है; 'अव' माने नीचे, 'तार' माने उतरना, आना । भगवान् अपने नित्य धाम से अवतार लेते हैं, नीचे अर्थात् माया के राज्य में स्थित इस धाम में आते हैं, जिससे हम जैसे साधारण जीव भी उनकी लीला, उनकी महिमा जानकर उनकी शरण में जायें । अवतार में उनकी चरणरज की महिमा का वर्णन करते हुए पाँचवें श्लोक में उनके दिव्य प्रभाव का वर्णन किया गया है । नन्दलाल का प्राकट्य हो चुका है । अवतार में जब वे प्रकट होते हैं या नित्य धाम में भी जब वे होते हैं तो श्रीजी के दिव्य कन्दर्प के प्रभाव से नित्य लीला में वे मूर्च्छित हो जाते हैं और वहाँ भी दिव्य धाम में 'श्रीजी' श्रीकृष्ण को जीवनदान देने वाली हैं । ऐसी जो निकुञ्ज देवी हैं, उनको 'अस्ति' शब्द का प्रयोग किया गया है । ऐसा नहीं कि श्रीजी अब यहाँ से चली गयी हैं । अवतार लेने के बाद भी वे यहाँ सदा रहती हैं । ऐसा नहीं समझना चाहिए कि अवतार इस धाम से अब चला गया । अवतार काल के बाद भी श्रीजी इस धाम में रहती हैं, इसीलिए 'अस्ति' शब्द को जोड़ा गया है अर्थात् श्रीजी का प्रादुर्भाव कृपा से सदा रहता है । वे काल के बन्धन में नहीं हैं कि अब आपको यहाँ से जाना पड़ेगा । वे यहाँ नित्य विराजमान हैं, इसलिए राधासुधानिधि के श्लोक-४० में 'यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे' कहा गया है, यह उनकी कृपा है; वे वृषभानुजी के भवन में सदा विराजती हैं ।

अरि बरसाने बजी बधाई, कीरति नें लाली जाई ||

वन्दनवार बँधे महलन में
अरि ऊँचे पै धुजा लगाई, कीरति ने ....|
उमा रमा वाय धन्य कहैं
अरि जो बरसाने की दाई, कीरति ने ....|
हार दियौ हियरे कौ रानी
अरि वाय खपरा रतन भराई, कीरति ने ....|
भानुमति राधा की बूआ
अरि वो लेत नेग मन भाई, कीरति ने ....|
दौरी-दौरी फिरैं मलिनियां
अरि वो तो फूलन गजरे लाईं, कीरति ने ....|
दौरी-दौरी फिरैं ढांढ़िनी
अरि वंसावलि नाच सुनाई, कीरति ने ....|
जसुदा गावत चली बधाई
अरि वो तो भानुराय घर आई, कीरति ने ....|
कनक थार में नीली झँगुली
अरि वो चूरो हँसली लाई, कीरति ने ....|
चकवा चकई भौंरा भौंरी
अरि वो संग में कुँवर कन्हाई, कीरति ने ....|
धन्य कूँख कीरति मैया की
अरि जाते राधा ब्रज में आई, कीरति ने ....|
जुग-जुग जीवैं लली भानु की
अरि सब दैं असीस सुखदाई, कीरति ने ....|

(-पूज्यश्री बाबा महाराज कृत)

गौ-सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA,
GAHVARVAN,BARSANA, MATHURA
Bank – Axis Bank Ltd ,
A/C – 915010000494364
IFSC – UTIB0001058 BRANCH – KOSI KALAN,
MOB. NO. – 9927916699

श्रीमानमन्दिर के
नवनिर्माण का कार्य तीव्र
गति से चलता हुआ

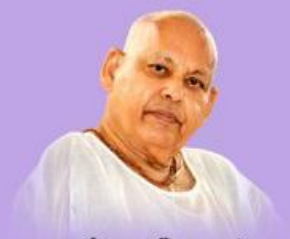

ब्रज के परम विरक्त संत

पूजनीय श्री रमेश बाबा जी महाराज

परम पूज्य संत श्री रमेश बाबा जी महाराज विगत 70 वर्षों से मान मंदिर पर अखंड ब्रजवास कर रहे हैं उन्होंने ब्रजधाम को ही श्री राधाकृष्ण का साक्षात् स्वरूप मान कर ब्रज संस्कृति, ब्रज के पर्यावरण, प्राचीन लीला स्थली, वन, उपवन एवं श्री यमुना जी के संरक्षण - संवर्धन के लिए अपना पूरा जीवन लगा दिया। साथ ही उनका यह भाव है कि ब्रज प्रेम एवं श्रीराधा कृष्ण की भक्ति का पूरे विश्व में प्रचार प्रसार हो जिससे संपूर्ण विश्व के लोगों को कृष्ण प्रेम से जोड़ा जा सके।

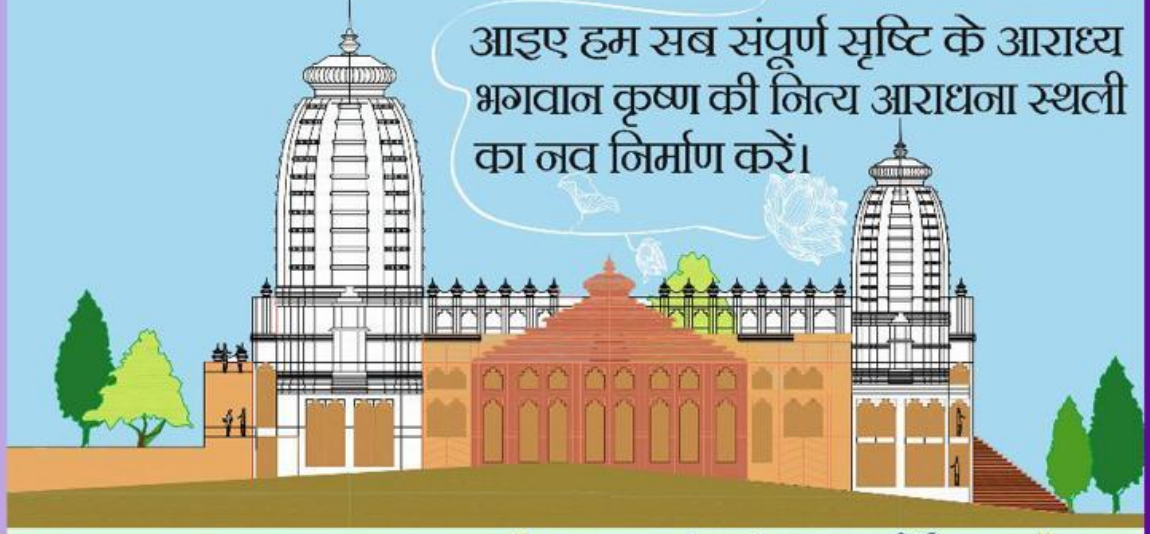

आइए हम सब संपूर्ण सृष्टि के आराध्य भगवान कृष्ण की नित्य आराधना स्थली का नव निर्माण करें।

राधे किशोरी दया करो

श्री मान मंदिर के जीर्णोद्धार की तकनीक सनातन परंपरा पर आधारित है

|| मूलाच्छतगुणं पुण्यं प्राप्नुयाज्जीर्णकारकः
तस्तमात्सर्वप्रयत्नेन जीर्णस्योद्धारमाचरेत् ||

देवी भागवत

श्री मान मंदिर सेवा संस्थान अपना हर कार्य परम पूज्य श्री रमेश बाबा महाराज जी की प्रेरणा व उनके ही सत्संकल्प अनुसार सेवारत है।

युगल सरकार श्री राधा कृष्ण की नित्य लीला स्थली मानमंदिर का जीर्णोद्धार भी उन्हीं सत्प्रयासों में से एक है जिससे ब्रज की एक अत्यंत विलक्षण लीला स्थल का पुनरुद्धार किया जा रहा है।

यह है सम्पूर्ण सृष्टि के आराध्य की नित्य आराधना स्थली के निर्माण का परम पुनीत कार्य !

श्री मान मंदिर सेवा संस्थान के लिए ब्रज सेवा और भगवान कृष्ण की सेवा में कोई अंतर नहीं है।

हम ब्रज संस्कृति, ब्रज के पर्यावरण, पर्वत, कुंड वन-उपवन आदि के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए सदैव तत्पर, प्रयत्नशील और कर्मशील है।

हमारे आज तक के सारे कार्य केवल भक्ति और ब्रजधाम की सेवा के लिए ही समर्पित रहे है।

श्रीमानमंदिर द्वारा किए जा रहे सेवा कार्य

ब्रज के अति पावन 6000 हेक्टेयर पहाड़ों पर विनाशकारी खनन के विरुद्ध ऐतिहासिक आंदोलन और उन्हें रिजर्व फोरेस्ट घोषित कराने में पूर्ण विजय प्राप्त की गई। अब ये सभी पर्वत अनंत काल के लिए सुरक्षित हो गए है।

ब्रज के 32 से अधिक पवित्र कुण्डों का संरक्षण और जीर्णोद्धार का कार्य सम्पन्न किया गया।

ब्रज के उजड़े वन क्षेत्रों में 2 लाख से अधिक वृक्षारोपण और ब्रज के कई प्राचीन वन फिर से जीवंत किए गए।

विगत २० वर्षों से यमुना नदी के तल पर यमुना जल के निर्मल व अविरल प्रवाह हेतु कई बड़े कार्यक्रम एवं आंदोलन आयोजित किए गए।

बरसाना स्थित ब्रज-वृन्दावन की सबसे बड़ी गौशाला श्रीमाताजी गौशाला, मानमंदिर द्वारा संचालित है जहाँ 55000 से अधिक गायों की मातृवत् सेवा हो रही है। ये वे गायें है जो कटने जा रही थी, उनकी रक्षा की गई जिनमें अधिकांश दुर्बल, बीमार, अपाहिज, दुर्घटना ग्रस्त, मृतप्राय और दूध न देने वाली गायें है।

ब्रज की संस्कृति का संरक्षण करने वाली सर्वाधिक लोकप्रिय और विशाल श्रीराधारानी वार्षिक ब्रज 84 कोस परिक्रमा जिसमे 15000 भक्त हर वर्ष पदयात्रा करते है। यह 40 दिवसीय भक्ति और रसमयी यात्रा पूर्णतया निःशुल्क है।

मानमंदिर के संतों व साध्वियों द्वारा ब्रज में वृहद स्तर पर भक्ति का प्रचार प्रसार कर समाज को जाग्रत किया जा रहा है।

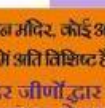

25 हजार से अधिक गांवों में प्रभात फेरी का सफल संचालन किया जा रहा है।

देश विदेश में निःशुल्क भागवत कथा, कीर्तन, ब्रज सम्मेलन आदि का संचालन कर निर्बाध रूप से कृष्णभक्ति व भारतीय आध्यात्मिकता का प्रचार प्रसार किया जा रहा है।

संस्थान द्वारा कई वर्षों से निःशुल्क विद्यालय, चिकित्सालय, गुरुकुल, आध्यात्मिक साहित्य का वितरण, हजारों भक्तों के लिए प्रतिदिन निःशुल्क भंडारा आदि का संचालन किया जा रहा है।

मान लीला स्थल - मान मंदिर, कोई आश्रम या संस्था विशेष स्थल नहीं अपितु श्री राधा कृष्ण की नित्य लीला स्थली में अति विशिष्ट है। यह है सम्पूर्ण सृष्टि के आराध्य का आराधना स्थल !

मंदिर जीर्णोद्धार के इस परम पुनीत कार्य में अपना यथासंभव योगदान देकर अनंत पुण्य के भागी बनें

संपर्क 9927338666
www.maanmandir.org
YOUTUBE/maanmandir
(नित्य लाइव सत्संग)

ACCOUNT NAME
SHRI MAAN BIHARI LAL MANDIR SEVA
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA

जहाँ जहाँ संतों ने भगवान की आराधना की है, उन्हें मनाया है, वह वह स्थल अनंत काल के लिए दिव्य बन गये, नित्य धाम बन गये।

विचार करें कि जिस स्थल पर स्वयं लीलापुरुषोत्तम, अखिल ब्रह्मांड नायक भगवान श्रीकृष्ण अपनी इष्ट राधा रानी की आराधना करते हैं, उन्हें मनाते हैं, उन्हें रिझाने के लिए कई कौतुक भरी चेष्टाएँ करते हैं, वह दिव्य स्थान कैसा होगा

पूरी सृष्टि में ऐसा सर्वोत्कृष्ट स्थल है

श्रीधामबरसाना, ब्रज स्थित मान लीला स्थल – 'मानमंदिर'

जहां जगदीश्वर अपनी आराध्या की नित्य उपासना करता है !

RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2021-2023

श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा गुप्ता ओफ़्सेट प्रिंटर्स A- 125/1 , wazipur industriyal area, new delhi- 52 **से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संसथान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित [AGRA/WPP-12/2021-2023 AT 22.12.23]**